अध्याय–6
फसलोत्पादन (Crop Production)

6.1 अनाज वाली फसलें (Cereal Crops)
धान (Paddy)
वानस्पतिक नाम –ओराइजा सेटाइवा (*Oryja sativa* L.)
कुल – पोएसी (Poaceae)

महत्त्व (Importance) : धान भारत की खाधान्न फसलों में सबसे महत्त्वपूर्ण हैं। इसके चावल में स्टार्च प्रचुर मात्रा में पाया जाता है जिसका कपड़ा उद्योग में अधिक प्रयोग होता हैं। इसमें कार्बोहाइड्रेट 77–79 प्रतिशत होता हैं। धान के पुआल का उपयोग कॉच एंव अन्य टूटने वाले सामान की पैकिंग करने में होता हैं। भारत में वैदिक काल से ही विभिन्न धार्मिक उत्सवों, पर्वो व कार्यों में चावल का प्रयोग होता आया हैं। धान की उत्पति के स्थान के बारे में भिन्न–भिन्न मत हैं कोई चीन, कोई भारत, कोई दक्षिण–पूर्वी एशिया मानते हैं।

राजस्थान में धान की खेती मुख्यतः कोटा, उदयपुर खण्ड तथा श्रीगंगानगर, हनुमानगढ जिलों में की जाती हैं।

जलवायु (Climate) : धान की फसल के लिए उष्ण तथा नम जलवायु की आवश्यकता होती है। धान की फसल 100 सेमी. वर्षा वाले क्षेत्रों से लेकर 200 सेमी. वर्षा वाले क्षेत्रों में आसानी से की जा सकती है। फसल की अच्छी बढ़वार के लिए 25^{o} से 30^{o} सेल्सियस और पकने के लिए 25^{o} से 30^{o} सेल्सियस तापमान अनुकूल रहता हैं।

मृदा (Soil) : धान की खेती के लिए अच्छी उर्वरता वाली समतल, अच्छे जल धारण क्षमता वाली मटियार, चिकनी मटियार दोमट, दोमट मृदाएँ उपयुक्त रहती हैं। काली मिट्टी धान के लिए सर्वाधिक उपयुक्त रहती हैं।

खेती की तैयारी (Field preparation) : धान की फसल के लिए खेत की तैयारी प्रायः दो प्रकार से की जाती है –

1. **खेत में सीधी बुआई के लिए**– धान की फसल के लिए खेत की एक जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से करके दो तीन बार हैरो/कल्टीवेटर या देशी हल से करें। बुआई से 15 दिन पूर्व सिंचाई कर दे ताकि सिंचाई के 5–7 दिन बाद खरपतवार उग जावें तब 2–3 बार हैरो चलाकर पाटा लगा कर भूमि समतल कर लेते हैं।
2. **रोपाई द्वारा**– इस प्रकार की खेती उन क्षेत्रों में की जाती है, जहाँ पानी की पर्याप्त मात्रा होती है और सिंचाई की समुचित व्यवस्था होती हैं। खेत में 20–25 टन गली सड़ी गोबर की खाद प्रति हेक्टेयर की दर से खेत में बिखेर कर अच्छी तरह जुताई कर भूमि में मिला दें।

उन्नतशील किस्में (Improved varieties) : राजस्थान में उगाई जाने वाली प्रचलित एवं विभिन्न स्थितियों में उपयुक्त उन्नत किस्में व उनकी विशेषताएँ निम्न हैं –

रोपाई हेतु उन्नत किस्में – रतना, जया, बी.के.79, कस्तूरी (आईईटी– 8580), बासमती 370, कावेरी, बासमती, माही, सुगंधा चम्बल।

सीधी बुआई हेतु किस्म – बाला, पूसा 2–21।

अन्य किस्में – पूसा 33, पूसा 44, गोविन्द, साकेत–4 आईआर–20, पूसा सुगन्ध– 2, 3, 4, 5 ।

संकर किस्में – पंत संकर धान –1, एचआरआई120, पूसा राईस, हाइब्रिड–10, (पीआरएच–10) पूसा नई दिल्ली द्वारा विकसित।

बीज दर (Seed rate) : धान की फसल के लिए बीज दर बुआई की विधि पर निर्भर करती हैं।

1. सीधे खेत में बुआई करने पर 80 से 100 किग्रा. बीज प्रति हैक्टेयर की आवश्यकता होती हैं।
2. रोपाई विधि से बुआई के लिए 40–50 किग्रा. बीज प्रति हैक्टेयर की आवश्यकता होती हैं।

बीजोपचार (Seed treatment) : थोथे बीजों को निकालने के लिए बीजों को 2 प्रतिशत नमक के घोल में डालकर अच्छी प्रकार हिलायें। ऊपर तैरते हल्के बीजों को निकाल देना चाहिए तथा पैंदे पर बैठे बीजों को साफ पानी से धोकर सुखाये। धान में जीवाणु अंगमारी से बचाव हेतु 25 ग्राम घुलनशील पादप फफूंद नाशी (2 प्रतिशत) कार्बेन्डाजिम 2.5 ग्रा./किग्रा. तथा डेढ़ ग्राम स्ट्रेप्टो साईक्लिन को 45 लीटर पानी में घोल बनाकर बीजों

को 12 घंटे तक भिगोकर रखे तथा अंकुरण क्षमता बढ़ाने एवं पौधे की बढ़वार तेज करने हेतु 1%सोडियम हाइपोक्लोराइड के घोल में 30–35 किग्रा. बीज को 12 घण्टे तक भिगोकर इस प्रकार बीजोपचार करने से बीजावरण पर लगी बीमारियों की रोकथाम होती हैं।

बुआई का समय (Time of sowing) : धान की बुआई/रोपाई मानसून की वर्षा शुरू होते ही कर देनी चाहिए। बुआई/रोपाई 15 जुलाई तक की जा सकती है।

बुआई की विधियाँ (Method of sowing) : धान की बुआई मुख्यतः दो प्रकार से की जाती हैं।

1. **खेत में सीधी बुआई विधियाँ** – धान की सीधी बुआई खेत में दो प्रकार से की जाती है।
   (अ) पंक्तियों में बुआई करके (ब) छिटकवाँ विधि

(अ) **पंक्तियों में बुआई करके** – देशी हल या सीडड्रिल द्वारा 20 सेमी. की दूरी पर कतारों में करनी चा

(i) **लेह युक्त खेत में सीधी बुआई**– लेह मृदा (Puddled soil) में 100 किलोग्राम अंकुरित बीजों को सीधे छिटककर खेत में बोया जाता है।

(ii) लेह रहित नीची मृदाओं में सीधी बुआई– इस विधि में शुष्क बीजों को छिटककर या कतारों में 20 सेमी. दूरी पर बोया जाता है।

2. **रोपाई विधि द्वारा** – इस विधि में लेह युक्त मृदा में नर्सरी में पौध तैयार करके रोपाई की जाती है, रोपाई के लिए कतार से कतार की दूरी 20 सेमी. तथा पौधे से पौधे की दूरी 10 सेमी. रखनी चाहिए। एक स्थान पर दो या तीन पौधे रोपने चाहिए, ओटोमेटिक पैडी प्लान्टर से रोपाई करना अच्छा रहता हैं।

नर्सरी तैयार करने की विधियाँ :

नर्सरी (पौध) तैयार करने के लिए सामान्यतः तीन विधियाँ काम में ली जाती हैं –

(1) गीली क्यारी विधि– इस विधि में खेत में पानी भरकर पडलर की सहायता से 2–3 जुताई की जाती है जिससे मृदा लेह युक्त हो जाये। एक–दो दिन बाद नर्सरी क्षेत्र को छोटे–छोटे भागों में बांटकर क्यारियाँ बनायी जाती है। एक हैक्टेयर क्षेत्रफल की धान की बुआई के लिए 8 x 1.25 मीटर आकार की 50 क्यारियों की आवश्यकता होती है। उर्वरक प्रबंध के लिए 250 ग्राम यूरिया तथा 500 ग्राम सिंगल सुपर फॉस्फेट प्रति 10 वर्गमीटर के हिसाब से देना चाहिए। इस विधि में अंकुरित बीज बोये जाते हैं जिसके लिए बीजों को साफ पानी में 24 घंटे तक भिगोते हैं। 24 घंटे बाद बीजों को निकालकर फर्श पर एकत्रित कर बोरी या कपड़े से ढक देते हैं। ताकि बीज गर्मी पाकर जल्दी अंकुरित हो जाये। अंकुरित बीजों को लेह किये गये खेत की मिट्टी के ऊपर समान रूप से छिटकर बोना चाहिए। 20–30 दिन पश्चात् पौधे रोपाई के लिए तैयार हो जाते हैं इस विधि में बीज की मात्रा पतली–मोटी किस्म के आधार पर 750 ग्राम से 1 किग्रा. तक प्रति क्यारी तक रखी जाती है।

(2) शुष्क क्यारी विधि– इसमें 2–3 जुताई करके मिट्टी को भुरभुरा बना लिया जाता है। क्यारियाँ गीली क्यारी विधि के आकार की बनाई जाती हैं। क्यारियों की ऊँचाई जमीन से ऊपर रखनी चाहिए ताकि अनावश्यक पानी बहकर नालियों (30 सेमी. चौड़ी) से बाहर निकल सके। क्यारियाँ बनाने के बाद बीज को 10 सेमी. की दूरी पर कतारों में बोना चाहिए। बरसात न होने के दौरान एक–दो दिन के अंतराल से हल्की सिंचाई करनी चाहिए। पौधे 25–30 दिन में रोपाई के लिए तैयार हो जाते हैं।

(3) डेपोग विधि– यह विधि अन्तर्राष्ट्रीय चावल अनुसंधान संस्थान (IRRI) मनीला, फिलीपीन्स द्वारा अनुमोदित की गई है। इस विधि में एक हेक्टेयर के लिए पौधे तैयार करने हेतु 25–30 वर्गमीटर क्षेत्र की आवश्यकता होती है। इसमें मिट्टी की आवश्यकता नहीं होती। 3 किग्रा. प्रति वर्गमीटर के हिसाब से अंकुरित बीजों की लगभग 1.5 सेमी. मोटी परत को पोलीथीन की चादर, केले के पत्तों, जूट के बोरों अथवा सीमेन्ट के फर्श पर बिछाकर उनमें प्रतिदिन पानी देते रहते हैं। इस विधि से 11–13 दिनों में पौधे तैयार हो जाते हैं। पौधों के तैयार होने के लिए किसी भी उर्वरक या खाद की आवश्यकता नहीं होती है पौधे तैयार होने के बाद छोटे–छोटे पौधों को सावधानी पूर्वक अलग–अलग कर लिया जाता हैं।

नर्सरी में पौध संरक्षण :–

खाद एवं उर्वरक (Manure and fertilizer) : धान की अच्छी पैदावार के लिए प्रति हैक्टेयर 80 से 120 किग्रा. नाइट्रोजन 40 से 60 किग्रा. फॉस्फोरस एवं 30 से 40 किग्रा. पोटाश की आवश्यकता होती है।

धान की रोपाई के 7–10 दिन बाद खेत में नील हरित शैवाल (ब्लू ग्रीन एल्गी) 15 किग्रा. प्रति हैक्टेयर देने से 20 किग्रा. नाइट्रोजन की बचत होती है। जस्ते की कमी से फसल में खैरा नामक रोग हो जाता है। जस्ते की पूर्ति के लिए 0.5 प्रतिशत जिंक सल्फेट के घोल का छिड़काव करना चाहिए। अच्छी उपज के लिए रोपाई से 3–4 सप्ताह पूर्व 20–25 टन गोबर की सड़ी खाद प्रति हेक्टेयर की दर से खेत की तैयारी करते समय मिट्टी में मिला देना चाहिए।

सिंचाई (Irrigation) : कुल जल आवश्यकता का करीब 40 प्रतिशत पौधे के स्थापित होने से कल्ले फूटने की क्रिया समाप्त होने तक, 50 प्रतिशत बाली निकलने से लेकर दानों में दूध भरने की क्रिया समाप्त होने तक तथा 10 प्रतिशत फसल के पककर तैयार होने में लगता है। फसल पकने से दो सप्ताह पहले खेत में भरे हुए पानी को निकाल देना चाहिए।

अन्तरा कृषि (Inter cropping) : घास कुल के खरपतवारों की रोकथाम के लिए बुआई/रोपाई के 2–3 दिन के

अन्दर प्रेटीलाक्लोर 1250 मिली. का प्रति हेक्टेयर, बिसपायरिकवेट सोडियम 80 मिली. या फिनॉक्साप्रोकप पी ईथाइल 500 मिली. 25–35 दिन के अन्दर प्रति हेक्टेयर का छिड़काव करना चाहिए। चौड़ी पत्ती वाले खरपतवारों के लिए बुआई/रोपाई के 2–3 दिन के अन्दर पाइरोजोसल्फ्यूरान 200 ग्राम या 20–25 दिन के अन्दर क्लोरीम्यूरॉन इथाईल, मेटासल्फयूरान मिथाइल 20 ग्राम या 2–4–डी 1000 मिली. 25–35 दिन के अन्दर प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव करना चाहिए।

पादप संरक्षण (Plant protection) :

कीटों की रोकथाम– धान में तना छेदक व फुदका के नियंत्रण हेतु कार्बोफ्यूरॉन 3 प्रतिशत कण, 20 किग्रा. या फोरेट 10 प्रतिशत कण 15 किग्रा. प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़कें। गंधी बग एवं थ्रिप्स के लिए एण्डोसल्फान 35 ई.सी. 500 मिली. को 600 लीटर पानी में मिलाकर रोपाई के 30–35 दिन बाद 2–3 सप्ताह के अन्तर पर आवश्यकतानुसार 2–3 बार छिड़काव करना चाहिए।

बीमारियों की रोकथाम – जीवाणु अंगमारी रोग की रोकथाम के लिए 25 ग्राम स्टेप्टोसाइक्लिन प्रति हेक्टेयर की दर से 500 लीटर पानी में घोलकर दवा का छिड़काव 10–15 दिन के अन्तराल पर दो बार करना चाहिए । ब्लास्ट एवं पत्ती धब्बा रोग का प्रकोप होते ही 1– 1.25 किग्रा. मेंन्कोजेब या 500 मिली कारटेजिन का घोल बनाकर छिड़काव करना चाहिए इसका छिड़काव 15 दिन बाद करें।

कटाई एवं मड़ाई (Harvesting and threshing) : जब दाने सख्त हो जाये तो धान की कटाई कर लेनी चाहिए। कटाई ठीक प्रकार से करने के लिए खेत से 10–15 दिन पूर्व पानी को बाहर निकाल देना चाहिए।

फसल की मढाई डंडों की सहायता से या शक्तिचालित मड़ाई यंत्र से करते है। धान के दानों को 14 प्रतिशत नमी रहने तक सुखाना चाहिए। धान की कुटाई करने पर चावल व छिलके का अनुपात 2:1 मिलता है।

उपज (Yield) : उन्नत किस्मों से 35–45 क्विन्टल धान असिंचित क्षेत्र में तथा 50–60 क्विन्टल उपज सिंचित क्षेत्र से प्रति हेक्टेयर प्राप्त होती है। सामान्यतः उपज 25–30 क्विन्टल प्रति हेक्टेयर होती है।

मक्का– (Maize) (Corn)

वानस्पतिक नाम - जिया मेज एल (*Zea mays L.*)

कुल - पोएसी (Poaceae)

महत्व (Importance) : मक्का एक मुख्य खाद्य फसल है मोटे अनाज की श्रेणी मे आता है इसे भुट्टे के रूप में खाया जाता है। मक्का कार्बोहाइड्रेट का अच्छा स्रोत है मक्का में कार्बोहाइड्रेट 76.8 प्रतिशत होता है। दानों को भून कर सत्तू के रूप में प्रयोग किया जाता है। मक्का की उत्पति अमेरिका तथा मेक्सिको मे हुआ। राजस्थान में उदयपुर, भीलवाड़ा, चितौड़गढ़, बांसवाड़ा, डूंगरगढ़, झालावाड़, श्रीगंगानगर, हनुमानगढ़, भरतपुर जिलो में उगाई जाती है।

जलवायु (Climate) : मक्का उष्ण व आर्द्र जलवायु की फसल है इसके लिए आदर्श तापमान 24°–30° सेल्सियस होता है। पकते समय गर्म व शुष्क वातावरण उपयुक्त रहता है। पौधों की अच्छी बढ़वार के लिए 60 से 70 प्रतिशत आपेक्षिक आर्द्रता होनी चाहिए।

मृदा एवं खेत की तैयारी (Soil and field preparition) : मक्का के लिए उचित जल निकास तथा बलुई दोमट व दोमट मृदा सर्वोतम रहती है। मृदा पीएच मान 6–8.5 उपयुक्त रहता है। मक्का के लिए खेत की तैयारी में पहली जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से व 2–3 जुताई हैरो या कल्टीवेटर कर पाटा लगाकर भुरभुरी बना लेते है।

उन्नतशील किस्में (Improved varieties)

संकर किस्में –

शीघ्र पकने वाली (80–100 दिन में)	मध्यम व देर से पकने वाली (100–120 दिन में)
बायो 9637, बायो 9681, एच.क्यू.पी. एम–1, एच.क्यू. पी.एम.5, पी ई.एच्च एम5, पी ई एच्च एम–1, प्रताप मक्का –1	डेक्कन 103, गंगा सफेद 2), गंगा–11, माही धवल
संकुल किस्में	**कम्पोजिट जातियाँ**
बस्सी सलेक्टेड, जी .एम.6, नवजोत, माही कंचन, प्रताप मक्का 3, प्रताप मक्का–5, अरावली मक्का	चन्दन सफेद मक्का 2, चन्दन मक्का–3, चन्दन मक्का–1

बीजदर एवं बीजोपचार (Seed rate and seed treatment) : मक्का फसल के लिए संकर किस्में 20–25 किग्रा. संकुल किस्मे 18–20 किग्रा. बेबी कार्न 22–25 किग्रा. चारे के लिए 40–45 किग्रा. बीज प्रति हेक्टेयर पर्याप्त रहता है। मक्का का बीज 3 ग्राम थाइरम या कैप्टान से उपचारित करना चाहिए अथवा 3 ग्राम कार्बोन्डाजिम 50 डब्लू पी या 6–10 ग्राम ट्राइकोडर्मा से डाउनीमिल्डयू प्रकोप वाले क्षेत्र में बीज एपोन 35 एसडी 4 ग्राम या एप्रोन एक्स एक 35 ईएस 1–2 मिली. दवा से प्रति किलो ग्राम बीजदर से उपचारित करना चाहिए ।

बुआई का समय एवं बुआई की विधि (Time of sowing and sowing method) : मक्का की बुआई खरीफ मे जून से जूलाई तक, रबी में अक्टूबर से नवम्बर तक, जायद में फरवरी से मार्च तक की जाती है। मक्का के लिये कतार से कतार की दूरी 45–60 सेमी, पौधे से पौधे की दूरी 20–25 सेमी. तथा बीज की गहराई 5–6 सेमी. रखते हुए करनी चाहिए।

खाद एवं उर्वरक (Manure and fertilizer) : मक्का की फसल में अच्छी उपज लेने के लिए 15–20 टन गोबर की सड़ी खाद, 80–120 किलोग्राम नाइट्रोजन 50–60 किलो ग्राम फास्फोरस 20–30 किलो ग्राम पोटाश एवं 25 किग्रा जिंक सल्फेट प्रति हेक्टेयर की दर से प्रयोग करना चाहिए।

सिंचाई (Irrigation) : राजस्थान में मक्का खेती वर्षा ऋतु में ली जाती हैं। वर्षा न होने पर प्रारम्भिक बढ़वार के समय, फूल आने के समय, दाना बनते समय एवं झडे (नरमंजरी) आते समय पानी की अधिक आवश्यकता होती है। जल निकास की उचित व्यवस्था होनी चाहिए।

अन्तरा कृषि (Inter cropping) : इसके लिए पहली निराई गुडाई, बुआई के 20–25 दिन बाद, दूसरी 35–45 दिन बाद करनी चाहिए तथा खरपतवार नियंत्रण के लिए प्रति हेक्टेयर आधा किलो ग्राम एट्राजिन सक्रियतत्व 600 लीटर पानी में घोलकर बुआई के 48 घण्टे के अदर या अकुंरण से पहले छिड़काव करें।

पादप सरंक्षण (Plant protection) : कीट एवं उपचार–

1 दीमक – खड़ी फसल में प्रकोप होने पर सिंचाई जल के साथ क्लोरोपायरीफॉस 20 प्रतिशत ईसी 2.5 लीटर प्रति हेक्टेयर की दर से प्रयोग करें।

2. तना छेदक कीट एवं प्ररोह मक्खी– इन कीटों के नियंत्रण हेतु कोर्बोफ्यूरान 30 से 20 किग्रा. या फोरेट 10 सीजी 20 किग्रा. अथवा डाईमिथोएट 30 प्रतिशत ई.सी. 1 लीटर प्रति हेक्टेयर अथवा क्यूनालफॉस 25 ई.सी. 1.5 लीटर का घोल बना कर छिड़काव करें।

जैविक नियंत्रण–

20 लीटर गोमूत्र में 5 किग्रा. नीम की पत्ती 3 किग्रा. धतूरा की पत्ती और 500 ग्राम तम्बाकू की पत्ती 1 किग्रा. बेसरम की पत्ती 2 किग्रा. अकौआ (आक) की पत्ती 200 ग्र. अदरक (यदि अदरक नहीं मिले तो) 250 ग्राम लहसुन, 1 किग्रा. गुड़, 25 ग्राम हींग, 150 ग्राम लाल मिर्च डालकर 3 दिनों के लिए छाया में रख दें। इस घोल की 2ढाई गुनी मात्रा प्रति हेक्टेयर प्रयोग करें इसे दो बार में 7–10 दिनों के अन्तराल पर छिड़काव करें। प्रति 15 लीटर पानी में 3 लीटर घोल मिलाया जाता है छिड़काव पूरी तरह तर कर के करें।

रोग उपचार :–तुलासिता रोग –पत्तियों पर पीली धारियाँ पड जाती है रोकथाम के लिए जिंककार्बनेट या जीरम 80 प्रतिशत 2 किग्रा. बुआई से पूर्व बीज को रीडामिल एम.जेड़. 4 ग्राम प्रति किलो बीज की दर से उपचार करना चाहिए।

पत्ती धब्बा(झुलसा)– पत्तियों पर बड़े या अण्डाकार (भूरे रंग के धब्बे पड़ जाते है) उपचार – जिनेब या जिंक मैगनीज कार्बमेट 2 किग्रा. या जिरम 80 प्रतिशत 2 लीटर या प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव करना चाहिए।

तना सड़न :– रोग के लक्षण दिखाई देते ही 15 ग्राम स्ट्रेप्टोसाइक्लीन या 60 ग्राम एग्रोमाइसीन तथा 500 ग्राम कोपर ओक्सीक्लोराईड प्रति हेक्टेयर की दर छिड़काव करने से लाभ होता है।

कटाई मढ़ाई (Harvesting and threshing) : मक्का की फसल अवधि पूर्ण होने के पश्चात चारे वाली फसल बोने के

60–65 दिन बाद दाने वाली देशी किस्म 75 से 85 दिन बाद संकर एवं संकुल किस्में 90 से 115 दिन बाद तथा दाने में लगभग 25 प्रतिशत की नमी होने पर कटाई करनी चाहिए । भुट्टों से दाने निकालने के लिए सेलर का उपयोग किया जाता है। अथवा साधारण थ्रेसर में सूखाकर मक्का की मढ़ाई की जाती है इसमें भुट्टे से छिलका निकालने की आवश्यकता नहीं होती, सीधे ही सूखे भुट्टे को थ्रेसर में डालकर मढ़ाई की जा सकती है, इससे दाने का कटाव नहीं होगा।

उपज (Yield) : उन्नत विधियों से खेती करने पर संकर किस्मों से 40–50 क्विंटल तथा संकुल किस्मों से 30–40 क्विंटल प्रति हेक्टेयर दर से दाने की उपज प्राप्त होती है। लगभग 30–40 क्विंटल सूखा चारा प्रति हेक्टेयर प्राप्त होता है।

ज्वार (Jwar / Sorghum)

वानस्पतिक नाम–सोरघम बाइकलर एल. (*Sorghum bicolor* L.)

कुल – पोएसी (Poaceae)

महत्व (Importance) : ज्वार एक प्रमुख खाद्यान है ज्वार को मोटा अनाज कहते हैं। ज्वार के दानों में 72.6 प्रतिशत कार्बोहाइड्रेट पाये जाते हैं। ज्वार के पौधे की पत्तियाँ छोटी अवस्था में एक ग्लूकोसाइड (धुरिन) पाया जाता है जिससे हाइड्रो सायनिक अम्ल पैदा होता है । इस अवस्था में चारा पशुओं को अधिक मात्रा में खिलाने पर पशुओं की मृत्यु हो सकती है। ज्वार की उत्पति स्थान कुछ विद्वान अफ्रीका और भारत, कुछ विद्वान अफ्रीका तथा एबीसीनिया मानते है। राजस्थान में ज्वार टोंक, पाली, अजमेर, कोटा, झालावाड़, जिलों मे उगाई जाती हैं।

जलवायु (Climate) : ज्वार गर्म जलवायु की फसल है ज्वार 32° से 35° सेल्सियस तापमान पर पौधों की वृद्धि अच्छी होती है इसलिए खरीफ और जायद की फसल के रूप में इसे उगाया जाता है। ज्वार 30–75 सें.मी. वार्षिक वर्षा वाले क्षेत्रों में सफलता पूर्वक उगाया जाता है।

मृदा एवं खेत की तैयारी (Soil and field preparation) : :– ज्वार के लिए दोमट एवं बलुई दोमट भूमि अच्छी मानी जाती है उचित जल निकास वाली भारी मृदा में भी उसकी बुआई की जा सकती है। भूमि का पीएच.मान 6.5 से 7.5 तक उपयुक्त रहता है अंतिम जुताई के समय 25 किग्रा. प्रति हेक्टेयर क्यूनालफॉस 1.5 प्रतिशत चूर्ण मिला दें। भारी मिट्टी एवं अधिक खरपतवार युक्त क्षेत्रों में गर्मी में एक गहरी जुताई करे ताकि वर्षा को जल अधिक मात्रा में सोखा का जा सके। वर्षा के साथ 2–3 जुताई देशी हल या हैरो से करे तथा पाटा लगा कर बुआई करते है।

उन्नतशील किस्में (Improved varieties) : सी.एस.एच.–5, सी.एस.एच.–14, एस.पी.वी.–245, एस.पी.वी.–96, एस.पी.वी.–346 सी.एस.वी.–13, प्रताप ज्वार 1430 ।

बहु कटाई वाली किस्में : मीठी सुडान, (एस.एस.जी. 59–3) एम.पी. चरी, पूसा चरी–23, जवाहर चरी– 69 ।

एक कटाई वाली किस्में – सी.एस.वी.–15, सी.एस.वी. –20, राज चरी –1, पूसा चरी–6 ।

मुख्य अन्य किस्में– जवाहर ज्वार 741, एस.पी.वी.1022, सी.एस.वी–1 (स्वर्णा), सी.एस.वी–15 ।

बीज दर एवं बीजोपचार (Seed rate and seed treament) : ज्वार का अनाज के लिए 9–10 किग्रा. चारा व दाना के लिए 15–20 किग्रा. बहुकटाई चारे के लिए 30–40 किग्रा. बीज प्रति हेक्टेयर काम लेना चाहिए। बीज को बोने से पूर्व थायरम 2.5–3 ग्राम प्रति किग्रा. बीज की दर से उपचारित करें।

बीज को 6–10 ग्राम ट्राइकोडर्मा से उपचारित कर सकते हैं बुआई पूर्व एजोस्पाइरिलम जीवाणु कल्चर से बीज उपचारित करें।

बुआई का समय एवं विधि (Time of sowing and method) : बुवाई जून के अन्त में या वर्षा शुरू होते ही कर देनी चाहिए। गर्मियों में चारे हेतु मार्च में (सिंचाईयुक्त क्षेत्रों में) बुआई करनी चाहिए। चारे के लिये बुआई छिटकवाँ विधि से भी की जा सकती है लेकिन बुआई कतार में करने से अधिक उपज मिलती है। कतार से कतार की दूरी 45 सेमी. पौधे से पौधे की दूरी 12–15 सेंमी. गहराई 1.5–2 सेंमी. पर बुआई करनी चाहिए। चारे वाली किस्मों की कतार से कतार की दूरी 25–30 सेंमी. रखनी चाहिए।

खाद एंव उर्वरक (Manure and fertilizer) : ज्वार के लिए अच्छी सड़ी हुई गोबर की खाद या कम्पोस्ट 15–20 टन प्रति हेक्टेयर की दर से बुआई के 15–20 दिन पूर्व खेत में अच्छी तरह मिला दें। इसके अतिरिक्त 80 किग्रा नत्रजन तथा 40 किग्रा फास्फोरस प्रति हेक्टेयर देनी चाहिए।

सिंचाई (Irrigation) : ज्वार की फसल के लिए बाजरा की तुलना में अधिक पानी की आवश्यकता होती हैं वर्षा ऋतु में बोई गई फसल में सिंचाई की आवश्यकता नही होती है। परन्तु लम्बे समय तक वर्षा न होने पर सिंचाई की जरूरत पड़ सकती है। ग्रीष्मकालीन फसल में 7–10 दिन के अन्तर पर सिंचाई करनी चाहिए।

अन्तरा कृषि (Inter cropping) : ज्वार की बुआई के 15–20 दिन बाद निराई गुड़ाई कर खरपतवार निकाल देने चाहिए। गुड़ाई करते समय ध्यान रहे कि पौधे की जड़े न कट जायें। ज्वार की शुद्ध फसल में खरपतवार नष्ट करने हेतु आधा किग्रा. एट्राजिन बुआई के तुरन्त बाद 600 लीटर पानी में घोल कर छिड़काव करना चाहिए।

पादप संरक्षण (Plant protection) : ज्वार की फसल में तना मक्खी और तना छेदक का प्रकोप होता है। इसकी रोकथाम के लिये बुआई के समय बीज के साथ 15 किग्रा. प्रति हेक्टेयर फोरेट 10 प्रतिशत या कार्बोफ्युरान 3 जी दानों कों डालना चाहिए फफूंद से होने वाली बीमारियों की रोकथाम के लिए मैन्कोजेब 0.2 प्रतिशत का घोल बनाकर छिड़काव करें।

कटाई / मढ़ाई (Harvesting and threshing) : चारे के लिये ज्वार की बुआई के 45–50 दिन बाद ही काटना चाहिए। बहु कटाई वाली किस्म की पहली कटाई 50–55 दिन बाद अगली कटाइयाँ 30–35 दिन के अन्तर पर करनी चाहिए। दाने की फसल में दाने पकने पर सिट्टों के हरे दाने सफेद या पीले रंग में बदल जाते हैं। दानों में जब नमी घटकर 25 प्रतिशत रह जावे तब कटाई कर लेनी चाहिए। पौधों से सिट्टे (बाली) अलग करने के बाद पौधो को सुखाकर कडवी (सूखा चारा) के रूप में रखा जाता है व मढ़ाई बैलों या शक्ति चालित ट्रैक्टर या थ्रेसर की सहायता से की जाती है।

उपज (Yield) : ज्वार की देशी किस्मों से 10–15 क्विंटल दाना, 100–150 क्विटल कड़वी। उन्नत व संकर किस्मों से 30–35 क्विंटल दाना तथा 80–100 क्विंटल कडवी प्रति हेक्टेयर उपज प्रात होती है हरे चारे की उपज 300–400 क्विंटल प्रति हेक्टेयर होती है।

बाजरा (Pearl millet)

वानस्पतिक नाम–पेनीसेटम टाइफोइड्स एल.

(*Pennisetum typhoides* L.)

या

पेंनीसेटम ग्लूकम एल.

(*Pennisetum glaucum* L.)

कुल . पोएसी (Poaceae)

महत्व (Importance) : बाजरा मोटे अनाज वाली खाधान्न फसलों में महत्वपूर्ण स्थान रखता है इसकी खेती दाना व चारा दोनों के लिए की जाती है। बाजरा के दाने को चावल की तरह पकाकर या आटे की रोटी बनाकर खाने मे उपयोग किया जाता है बाजरे के दाने की पौष्टिक गुणवत्ता ज्वार से अधिक होती है इसमें लगभग 73 प्रतिशत कार्बोहाइड्रेट्स पाई जाती है। कुछ विद्वान बाजरा का उत्पति स्थान अफ्रीका, तो कुछ भारत मानते है। राजस्थान में बाडमेर, नागौर, सीकर, बीकानेर, झुंझुनू, जयपुर, जिलों में उगाया जाता है।

जलवायु (Climate) : इसकी बढवार के लिए नम तथा ऊष्ण मौसम अधिक उपयुक्त रहता है। फसल में फूल आते समय व दाना बनते समय व पकते समय स्वच्छ आकाश व तेज धूप की आवश्यकता होती है।

मृदा एवं खेत की तैयारी (Soil and field preparation) : बाजरा के लिए जल निकास युक्त बलुई दोमट व दोमट मृदा जिसमें जलधारण क्षमता अच्छी हो उपयुक्त रहती है साधारणतया इसकी खेती सभी तरह की मृदाओं मे की जा सकती है लेकिन हल्की मिट्टी में इसकी खेती बड़े पैमाने पर होती है बाजरा का खेत तैयार करने के लिए गर्मी में गहरी जुताई करे एवं वर्षा होते ही 2–3 जुताई देशी हल या कल्टीवेटर से करके पाटा लगाकर मृदा भुरभुरी व समतल कर लेते हैं। भूमिगत कीटो को नष्ट करने के लिए 12 किग्रा. कार्बोफ्यूरान 3 प्रतिशत या क्यूनालफास 5 प्रतिशत की दर से बुआई के समय मिट्टी में मिला देना चाहिए।

उन्नत शील किस्में (Improved varieties) : आर. एच.बी.–121, एच.एच.बी–67, एच.एच.बी–60, जी.एच.बी–538, आर.एच.बी. 90, पूसा–605, आर.एच.बी.177, आर.एच.बी 173। **अन्य किस्में:–** जी.एच.बी. 719, जी.एच.बी.–744, एच.एच.बी. 94, एच.एच.बी. 719, आई.सी.टी. 8203(संकुल), एम.एच.169 (पूसा–23)।

चारे के लिए – राज बाजरा चरी–2, जायद बाजरा ।

बीजोपचार (Seed rate and seed treatment) : दाने के लिए 4–5 किग्रा. प्रति हेक्टेयर एवं हरे चारे के लिए 10–12 किग्रा. प्रति हेक्टेयर बीज पर्याप्त रहता है। बीजों को 20 प्रतिशत नमक के घोल से उपचारित कर तत्पश्चात 3 ग्राम थाइरम से प्रति किलो बीज की दर से उपचारित करें। दीमक प्रकोप होने पर 4 मिली. क्लोरोपायरीफॉस 20 ईसी से प्रति किलो बीज उपचारित करे। क्षारीय व लवणीय मिट्टी में बुआई करनी हो तो बीज को 1 प्रतिशत सोडियमसल्फेट में 12 घन्टे तक भिगोकर साफ पानी से धोकर छाया मे सुखने के बाद कवक नाशी से उपचारित करके बोयें।

बुआई का समय एवं विधि (Time of sowing and method): बाजरा की बुआई असिंचित क्षेत्र मे वर्षा आने पर, सिंचित क्षेत्र मे समय पर बुआई जून मध्य से जुलाई तृतीय सप्ताह तक, वर्षा समय पर न हो तो अच्छी उपज के लिए फसल कतार में बोना चाहिए कतार से कतार की दूरी 40–45 सेमी. वर्षा वाले क्षेत्र में 60 सेंमी., मिश्रित फसल में 30 सेंमी. तथा पौधे से पौधे की दूरी 10–15 सेमी. व गहराई 2–5 सेमी. पर बुआई करनी चाहिए।

खाद एंव उर्वरक (Manure and fertilizer) :

1. बुआई से 4 सप्ताह पूर्व 10–15 टन गोबर की सड़ी हुई खाद प्रति हेक्टेयर की दर से भूमि में मिला दें।
2. असिंचित क्षेत्र में 30 किग्रा. नत्रजन 20 किग्रा. फॉस्फोरस बुआई के समय प्रयोग करें।
3. सिंचित क्षेत्र मे बुआई के समय 30 किग्रा. नत्रजन एंव 40 किग्रा. फास्फोरस 25 किग्रा. जिंक सल्फेट का उपयाग करें तथा 30 किग्रा. नत्रजन 35–40 दिन बाद सिट्टे बनते समय पर्याप्त नमी की अवस्था में छिड़क कर देनी चाहिए।

सिंचाई (Irrigation) : बाजरा की फसल खरीफ मे वर्षा द्वारा ली जाती है समय पर वर्षा होने पर सिंचाई की आवश्यकता नही पड़ती यदि वर्षा नही होतो फुटान के समय, सिट्टे बनते समय भूमि में नमी की कमी नही होनी चाहिए अर्थात सिंचाई कर देनी चाहिए।

अन्तरा कृषि (Inter cropping) : बुआई के 20–30 दिन बाद निराई गुड़ाई कर खरपतवार निकाल देना चाहिए तथा कमजोर पौधों को निकाल कर पौधों से पौधों की दूरी 10–15 से. मी. कर देनी चाहिए आवश्यकता होने पर 15–20 दिन बाद दूसरी निराई गुड़ाई कर देनी चाहिए खरपतवार नियंत्रण के लिये प्रति हेक्टेयर आधा किग्रा. एट्राजीन सक्रिय तत्व 600 लीटर पानी मे घोल बनाकर छिडकाव करें।

पादप संरक्षण (Plant protection) : कीट–कातरा, हरातेला, गन्धी बग के नियत्रण के लिए क्यूनालफास 1.5 प्रतिशत या मिथाइिल पैराथियान 2 प्रतिशत चूर्ण का 25 किग्रा. प्रति हेक्टेयर की दर से भुरकाव करना चाहिए। सफेद लट के लिए 1 किग्रा. बीज को 3 ग्राम कार्बोफ्यूरान (3 प्रतिशत) या क्यूनालफॉस (5 प्रतिशत) कण मिलाकर बुआई करें।

रोग–जोगिया (ग्रीन ईयर) या हरित बालरोग :–

1. रोग रोधी किस्में बोयें
2. रोग ग्रस्त पौधो को निकाल कर नष्ट कर देना चाहिए।
3. फसल बुआई के 21 दिन बाद मैन्कोजेब 2 ग्राम प्रति लीटर की दर से छिड़के (इस रोग में सिट्टे के स्थान पर पत्तियों का गुच्छा बन जाता है)
4. फसल चक्र अपनाना चाहिए।

अरगट (चेपा, गूंदिया) : इस रोग में सिट्टे पर गोंद जैसा चिपचिपा सा पदार्थ उत्पन्न होता है रोग से बचाने हेतु सिट्टे निकलते समय 2 ग्राम जाइनेब या मैन्कोजेब प्रति लीटर पानी में घोल कर दो तीन दिन के अन्तर पर 2–3 छिड़काव करने से प्रकोप कम होता है रोग ग्रस्त पौधों को उखाड कर नष्ट कर देना चाहिए। नमक के 20 प्रतिशत घोल में बीज को डुबोकर बुआई करनी चाहिए।

कटाई मढ़ाई (Harvesting and threshing) : फसल अक्टूबर के पहले सप्ताह तक पक कर तैयार हो जाती है। खडी फसल में हसिंया से सिट्टे को काटना चाहिए, कई क्षेत्रो में पहले फसल काट ली जाती है फिर सिट्टे तोड़ लिए जाते हैं जब दानों में नमी की मात्रा 20 प्रतिशत हो तभी सिट्टे पौधे से अलग करने चाहिए। सिट्टो को सुखा कर मढ़ाई बैलो द्वारा या शक्ति चालित थ्रेसर से कर लेते हैं।

उपज (Yield) : उन्नत विधियों से बाजरा की खेती करने की औसत 15–20 क्विटंल प्रति हेक्टेयर दर दाने की उपज तथा 50–60 क्विंटल सुखा चारा प्रति हेक्टेयर तथा चारे की फसल से 250–300 क्विंटल हरा चारा प्रति हेक्टेयर उपज प्राप्त होती है ।

गेहूँ – (Wheat)

वानस्पतिक नाम–ट्रिटिकम एस्टिवम एल. (*Triticum aestivum* L.)

या

ट्रटिकम वल्गेयर एल. (*Triticum vulgare* L.)

कुल – पोएसी (Poaceae)

महत्व (Importance) : गेहूँ मुख्य खाद्यान्न फसल है जो धान के बाद दूसरे स्थान पर आता है। पौष्टिकता की दृष्टि से भी गेहूँ का महत्वपूर्ण स्थान है गेहूँ के दाने में 62–71 प्रतिशत कार्बोहाईड्रेट्स, गेहूँ का उपयोग मुख्यतः पीस कर (आटा) रोटी, चपाती, डब्बल रोटी, बिस्कुट, सूजी दलिया, मैदा, सेवैया, पेस्ट्री आदि बनाने में किया जाता है। गेहूँ के दाने चोकर व भूसे को पौष्टिक पशु आहार के रूप में काम में लिया जाता है। गेहूँ की उत्पति मध्य एशिया से लेकर दक्षिण – पूर्वी यूरोप तक मानते है। राजस्थान में श्रीगंगानगर, हनुमानगढ, जयपुर, कोटा, अलवर, भरतपुर, चितौड़गढ़ एवं सवाईमाधोपुर प्रमुख उत्पादक जिले है।

जलवायु (Climate) : गेहूँ शीतोष्ण जलवायु की फसल है। गेहूँ के अकुरण के लिए न्यूनतम तापमान 3.5°–5.5° सेल्सियस इष्टतम तापमान 20°–25° सेल्सियस अधिकतम तापमान 35° सेल्सियस है। पौधे को ठण्डा मौसम अनुकूल रहता है। अधिकतम तापमान होने के करण फसल समय से पहले ही पक जाती है। उपज कम हो जाती है। फसल पकने के लिये इष्टतम औसत तापमान 14°–15° सेल्सियस रहता है। उचित पौधे वृद्धि एवं बढ़वार के लिए 50–60 प्रतिशत तक आर्द्रता उपयुक्त पायी गयी है।

मृदा एवं खेत की तैयारी (Soil and field preparation) : गेहूँ के लिए अच्छे जल निकासयुक्त मृदा बलुई दोमट एवं दोमट मृदा सर्वोत्तम है। गेहूँ के लिए उत्तम संरचना वाली व पर्याप्त जल धारण करने वाली ऐसी मृदा जिनका पीएच मान 6–8.5 हो अच्छी रहती हैं। अधिक अम्लीय व अधिक क्षारीय लवणीय मृदा उपयुक्त नहीं रहती है।

गेहूँ के लिये खारीफ की फसल काटने के बाद मिट्टी पलटने वाले हल से गहरी (20–25 सेमी.) जुताई करनी चाहिए। यदि नमी कम हो तो सिंचाई के बाद गहरी जुताई करनी चाहिए। इसके बाद 3–4 जुताई देशी हल या कल्टीवेटर चलाकर मिट्टी को भुरभुरी बना देना चाहिए। दीमक व अन्य भूमिगत कीटों के नियंत्रण हेतू एण्डोसल्फान 4 प्रतिशत या क्यूनालफॉस 1.5 प्रतिशत चूर्ण 25 किग्रा. प्रति हेक्टेयर की दर से बुआई के पूर्व अन्तिम जुताई के समय खेत में मिला देना चाहिए।

उन्नतशील किस्मे (Improved varieties) : राज. 1482, राज. 3077, राज. 3765, एच.डी. 2329, एच.डी. 2687, राज. 3777, पी.बी.डब्ल्यु 373, डब्ल्यु एच 147, राज. 4083, राज. 4120, लोक–1 ।

अन्य उन्नतशील किस्में : राज. 1555, एच. डी. 2009 (अर्जुन), एच.आई. 8498, जी.डब्ल्यु. 173, जी.डब्ल्यु. 273, एच.डी. 2967, एच.आई. 1077, एच.आई. 1544, एच.आई. 8381, खारचिया 65, एच.आई. 617(सुजाता) आदि।

बीज दर एवं बीजोपचार (Seed rate and seed treatment) : गेहूँ की बीज की मात्रा बुआई की विधि पर निर्भर करती हैं। सामान्य बुआई में 100 किग्रा., देर से बुआई असिंचित लवणीय व क्षारीय क्षेत्र पेटा काश्त के 125 किग्रा., छिटकवॉ विधि से 125–150 किग्रा., डिवलर विधि से 30–40 किग्रा. बीज प्रति हेक्टेयर की आवश्यकता होती है। ईयर कोल व टुण्डु रोग के लिए रोग ग्रस्त बीज को 20 प्रतिशत नमक के घोल में डुबोयें प्रतिकिलो बीज 2.5 ग्राम थायरम या 2 ग्राम कार्बेन्डाजिम 50 डब्ल्यू पी या 2–2.5 ग्राम मैन्कोजेब या 6–10 ग्राम ट्राईकोडर्मा से बीज उपचारित करें । इसके बाद प्रति किलो बीज 5 मिली. क्लोरेपायरीफॉस 50 ईसी से उपचारित करें लवणीय मृदा या खारे पानी वाले क्षेत्र में बीज को सोडियम सल्फेट के 3 प्रतिशत घोल (1.5 किग्रा.) सोडियम सल्फेट का 50 लीटर पानी में घोल बना कर 24 घण्टे डुबोना चाहिए। बाद में साफ पानी से धोकर छाया में सुखाकर प्रयोग करना चाहिए और अन्त में प्रति हेक्टेयर खेत के बीजों के लिए पी.एस.बी. व एजोटोबैक्टर प्रत्येक का 600 ग्रा. कल्चर लेकर गुड़ के पानी में घोल बनाकर उपचारित करें।

बुआई का समय एवं विधि (Time of sowing and method) : गेहूँ की असिंचित बुआई 15 अक्टुबर से 15 नवम्बर तक, अगेती सिंचित 25 अक्टुबर से 7 नवम्बर, समय पर बुआई नवम्बर के प्रथम सप्ताह से तीसरे सप्ताह तक, पिछेती बुआई नवम्बर अन्तिम सप्ताह से दिसम्बर प्रथम सप्ताह तक करें। गेहूँ की बुआई कतारों में की जाती है। कतार से कतार की दूरी 20–22.5 सेमी. तथा पौधे से पौधे की दूरी 10–12 सेमी. रखते हुए 3–5 सेमी. गहराई पर बुआई कर देनी चाहिए। बुआई ट्रैक्टर चालित ओटोमैटिक सीडड्रिल से करने पर बीज समान रूप से गिरता है। उन्नतशील किस्मों के कम बीज को अधिक क्षेत्र में बोने के लिए डिबलर से भी की जाती है।

खाद एवं उर्वरक (Manure and fertilizer) : गेहूँ की अच्छी उपज लेने के लिए बुआई के 4–6 सप्ताह पूर्व 15–20 टन गोबर की खाद प्रति हेक्टेयर मिट्टी में मिला दें। यदि हो सके तो तीन साल में एक बार हरी खाद का प्रयोग अवश्य करें। अच्छी उपज के लिए 100–120 किग्रा. नाइट्रोजन 30–40 किग्रा. फास्फोरस 30 किग्रा. पोटाश प्रति हेक्टेयर प्रयोग करें नाइट्रोजन की आधी मात्रा नाइट्रोजन, फॉस्फोरस व पोटाश की पूरी मात्रा बुआई के पूर्व अन्तिम जुताई के समय पर कर दें।

सिंचाई (Irrigation) : सिंचाई की संख्या उस स्थान की जलवायु, मृदा संरचना, फसल की सघनता व बढवार पर निर्भर करती है। सामान्यतः गेंहूँ की फसल का भारी मृदा मे 4–6 और हल्की मृदा में 6–8 और सिंचाइयों की आवश्यकता होती है गेहूँ की फसल में निम्न अवस्थाओं पर सिंचाई करना उपयुक्त पाया गया हैं।

सिंचाई की क्रांतिक अवस्थाएँ (Critical Stages) :

प्रथम सिंचाई बुआई के 20–25 दिन शीर्ष जड़ जमाव के समय

द्वितीय सिंचाई बुआई के 40–45 दिन बाद फुटान के समय

तृतीय सिंचाई बुआई के 60–65 दिन बाद गाँठ बनते सम
चौथी सिंचाई बुआई के 80–85 दिन बाद बाली बनते समय
पाँचवी सिंचाई बुआई के 100–105 दिन बाद दूधिया अवस्था में
छठी सिंचाई बुआई के 115–120 दिन बाद दाना पकते समय

अन्तरा कृषि (Inter cropping) : गेंहूँ की प्रथम सिंचाई के बाद 25–30 दिन पर एक निराई गुड़ाई अवश्य करें खरपतवारों को नष्ट करने के लिए बोनी किस्मों मे बुआई के 25–30 दिन के बीच प्रति हेक्टेयर आधा किलो 2–4 डी एस्टर 750 लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करें, एच डी 2009 में 2 –4 डी प्रयोग न करें। गेहूँ मे बुआई के 30–35 दिन बाद मेटसल्फेयुरान मिथाइल खरपतवार नाशी का 4 ग्राम (सक्रिय तत्व) या कारफेन्टाजोन (घुलनशील तत्व) की 20 ग्राम मात्रा प्रति हेक्टेयर 600 लीटर पानी मे घोलकर छिड़काव करे गुली डंडा (फेलेरीसमाईनर) जगंली जई का प्रकोप को वहाँ की फसल बुआई के 30–35 दिन बाद आईसोप्रोटयूरान हल्की मिट्टी हेतु 800 ग्राम तथा भारी मिट्टी में 1200 ग्राम सक्रिय तत्व प्रति हेक्टेयर का पानी में घोल बनाकर एक साथ छिड़काव करें।

पादप सरंक्षण (Plant protection) :

1. पाले से बचाने की आवश्यकता हो तो 0.1 प्रतिशत (पानी में एक मिली.) गंधक तेजाब का छिड़काव करना।
2. दीमक के लिये क्लोरपायरीफॉस 20 ईसी 2400 मिली. प्रति हेक्टेयर की दर से सिंचाई के साथ प्रयोग करे।
3. तना छेदक मक्खी एवं थ्रिप्स मकड़ी (माईट) मोयला व तेला–अंकुरण के समय तना छेदक का प्रकोप होने पर मानोक्रोटोफॉस (36 प्रतिशत एस एल) 1200 मिली. या मिथाइल डिमेटॉन 25 ईसी 1200 मिली. प्रति हेक्टेयर पानी में मिलाकर छिड़काव करें। मकड़ी, मोयला, तेला के लिए मिथाईल डेमेटॉन 25 ईसी या डाइमिथोएट 30 ईसी 1200 मिली प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव करें आवश्यकता अनुसार 15 दिन बाद पुनः छिड़काव करें।
4. सैन्यकीट चने वाली लट, पायरिला, फली बीटल, ग्रास हॉपर के रोकथाम के लिए मिथाइल पैराथियान (2 प्रतिशत) चूर्ण 24 किग्रा. प्रति हेक्टेयर छिड़काव करें।
5. चूहों की रोकथाम के लिए एक भाग जिंक फास्फाइड को 47भाग आटे और दो भाग तिल या मूंगफली के तेल में मिलाकर विशेष चुगा तैयार कर आबाद बिलों के पास रखे या आधा ग्राम एल्यूमिनियम फास्फॉइड की गोलियाँ प्रति बिल की दर से डालकर बिल बन्द करे।

झुलसा रोग एवं पत्ती धब्बा रोग – गेहूँ की फसल को झुलसा व पत्ती धब्बा रोग से बचाने के लिये जनवरी के प्रथम सप्ताह में मैन्कोजेब 2 ग्राम प्रति लीटर पानी में घोल बनाकर 15 दिन के अन्तर पर 3–4 बार छिड़काव करें ।

रोली रोग –रोली रोग की रोकथाम हेतु 25 किग्रा. गन्धक चूर्ण का प्रति हेक्टेयर की दर से 15 दिन के अन्तर पर 2–3 बार सुबह या शाम के समय भुरकाव करें। रोली रोधी किस्में बोये। मैन्कोजेब 3 ग्राम प्रति लीटर का घोल बना कर छिड़काव करें ।

अनावृत रोग व पत्ती कण्डवा रोग : रोग दिखाई देते ही रोगग्रस्त पौधो को उखाड़कर नष्ट कर दें मई और जून में बीज का सौर उपचार करें या बीज को बुआई से पूर्व 2 ग्राम बीटाबेक्स प्रति किलो की दर से उपचारित करें।

ईयर कोकल एवं टुण्डू रोग : इस रोग में गेहूँ के दाने की जगह कोकल बन जाता है जिनमें कृमि के हजारों अण्डे होते है टुण्डु रोग साथ होने से पत्तियों व बालियों में एक पीले रंग का गोंद जैसा चिपचिपा पदार्थ निकलता है इसे रोकने के लिए बीज को नमक के 20 प्रतिशत घोल से उपचारित कर साफ पानी से धोकर छाया मे सुखा कर बोना चाहिए ऊपर तैरते कचरे को निकालकर जला दें।

कटाई एवं मड़ाई (Harvesting and threshing) : गेहूँ की फसल पकने के तुरन्त बाद मार्च–अप्रेल में कटाई कर लेनी चाहिए अन्यथा बलियों से दाना झड़ने या टूटने या पशु–पक्षियों से हानि होने की सम्भावना रहती है जब दानों मे 20 प्रतिशत नमी हो व पौधे की पत्तियाँ पीली हो जाती है तब कटाई कर लेनी चाहिए कटाई के बाद फसल को 5–6 दिनों तक धूप में सूखाकर मड़ाई कर लेनी चाहिए थ्रेसर से मड़ाई करते समय इस बात का विशेष ध्यान रखना चाहिए कि दानों में नमी अधिक न हो।

उपज (Yield) : उन्नतशील व बोनी किस्मों से 50–60 क्विंटल तक उपज प्रति हेक्टेयर प्राप्त होती है। देशी किस्मों से व असिंचित क्षेत्र से 15–20 क्विंटल प्रति हेक्टेयर उपज प्राप्त होती है।

जौ –(Barley)
वानस्पतिक नाम–होर्डियम वल्गेयर एल. (*Hordeum vulgare* L.)
कुल – पोएसी (Poaceae)

महत्त्व (Importance) : जौ रबी ऋतु मे उगाई जाने वाली खाद्यान्न की प्रमुख फसल है इसका प्रयोग मानव आहार एवं पशुओ के दाने व चारे के लिए किया जाता है हमारे देश मे जौ का प्रयोग रोटी बनाकर तथा चने अथवा गेहूँ के साथ मिलाकर रोटी के रूप में किया जाता है। जौ का प्रयोग अनेक औद्योगिक पदार्थ, माल्ट, शराब, बीयर, पेपर, फाइबर पेपर, फाइबर बोर्ड आदि के लिए किये जाते है जौ के दाने मे 64–78 प्रतिशत कार्बोहाइड्रेट्स, जौ का उत्पति स्थान दक्षिण पूर्वी एशिया में चीन तिब्बत और नेपाल का क्षेत्र है। राजस्थान में जौ की खेती थोड़ी बहुत सभी जिलों में की जाती है लेकिन अजेमर, जयपुर, दौसा, झुन्झुनू, अलवर, भरतपुर व सवाईमाधोपुर मुख्य जिले हैं।

जलवायु (Climate) : जौ शीतोष्ण जलवायु की फसल हैं। इसके लिए ठण्डी और नम जलवायु की आवश्यकता होती हैं। यह सूखा सहन करने वाली है, इसलिए 60–100 सेमी. वार्षिक वर्षा वाले क्षेत्रों मे उगाया जा सकता है। जौ के अच्छे अंकुरण 25°–30° सेल्सियस पौधे वृद्धि के लिए 12°–15° सेल्सियस और परिपक्वता के समय 30° सेल्सियस तापमान की आवश्यकता होती है बालियाँ बनते समय अधिक आर्द्रता हो तो रोग एवं व्याधियो का प्रकोप बढ़ता है।

मृदा एवं खेत की तैयारी (Soil and field preparation) : जौ की खेती के लिए बलुई दोमट एवं दोमट मृदा उपयुक्त रहती हैं। जौ की खेती हल्की लवणीय क्षारीय भूमि में की जा सकती हैं। सूखे एवं क्षारीय दशाओं में जौ ही एक मात्र फसल जिसे सफलता पूर्वक उगाया जा सकता है। जौ के लिए खरीफ की फसल कटने के बाद मिट्टी पलटने वाले हल से एक जुताई करनी चाहिए। सिंचित क्षेत्र मे पलेवा कर दो –तीन जुताइयाँ देशी हल या हैरो से करके खेत तैयार किया जाता हैं। जुताई के बाद पाटा चलाकर मिट्टी को भुरभुरी बना लेना चाहिए। भूमिगत कीटों की रोकथाम के लिए प्रति हेक्टेयर 25 किलोग्राम एण्डोसल्फान 4 प्रतिशत या क्युनालफॉस 1.5 प्रतिशत का चूर्ण मिट्टी में मिला देना चाहिए।

उन्नतशील किस्में (Improved varieties) : बीएल. 2, ज्योति, आर.डी. 31, आर.डी. 57, आर.डी.103, आर.डी. 387 (राजकिरण), आर.डी. 2552, आर.डी. 208, आर.डी. 2660, आर. डी. 2592, आर.डी. 2624, आर.डी. 2715।

बीजदर एवं बीजोपचार (Seed rate and seed treatment) : सामान्य व सिंचित क्षेत्र के लिये 100 किग्रा. दर से बुआई असिंचित क्षेत्र लवणीय क्षेत्र के लिये 125 किग्रा. प्रति हेक्टेयर बीज पर्याप्त रहता है। बुआई से पूर्व बीज को प्रति किलो बीज की दर से 2.5 ग्राम थाइरम या 2.5 ग्राम मेन्कोजेब या 2 ग्राम कार्बेन्डाजिम 50 डब्ल्यू.पी. या 6–10 ग्राम ट्राईकोडर्मा या 5 मिली. क्लोरोपायरीफास 20 ई.सी. से उपचारित करके बोना चाहिए।

बुआई का समय एवं विधि (Time of sowing and method) : जौ की फसल की बुआई असिंचित क्षेत्र में अक्टूबर से, सामान्य एवं सिंचित क्षेत्र में 15 अक्टूबर से 15 नवम्बर तक एवं पिछेती बुआई 15 नवम्बर से 5 दिसम्बर तक कर देनी चाहिए। जौ की फसल की बुआई कतारों में कतार से कतार की दूरी 22.5 सेमी तथा देर से बोई गई फसल में 25 सेमी. तथा पौधे से पौधे की दूरी 10–11.25 सेमी. की दूरी पर 5–6 सेमी. गहराई पर बीज की बुआई करनी चाहिए।

खाद एवं उर्वरक (Manure and fertilizer) : जौ की अधिक उपज लेने के लिये प्रति हेक्टेयर 8–10 टन गोबर की सड़ी हुई खाद 4–5 सप्ताह पूर्व भूमि में मिला दें तथा 40–60 किग्रा. नत्रजन 30–40 किग्रा. फास्फोरस एवं 20–30 किग्रा. पोटाश एवं 25 किग्रा. जिंक सल्फेट प्रति हेक्टेयर देनी चाहिए।

सिंचाई (Irrigation): जौ की फसल सामान्यतः हल्की एवं दोमट मिट्टी में 4–5 सिंचाइयों और भारी मिट्टी में 2–3 सिंचाइयों की आवश्यकता पड़ती है। बुआई के 25–30 दिन बाद पहली सिंचाई दें इसके बाद आवश्यकतानुसार सिंचाई करते रहें। फूल आने एवं दाने की दूधिया अवस्था में पानी की कमी नहीं होनी चाहिए अन्यथा उपज पर बुरा प्रभाव पड़ता है। नहरी क्षेत्र में प्रथम सिंचाई 25–30 दिन बाद दूसरी 65–70 दिन बाद एवं तीसरी 100–110 दिन बाद करें।

अन्तरा कृषि (Inter cropping) : प्रथम सिचांई के बाद 1 बार 30–35 दिन पर निराई गुड़ाई कर देनी चाहिए। खरपतवारों का रासायनिक नियंत्रण गेंहूँ की फसल के समान करना चाहिए।

पादप संरक्षण (Plant protection) : जौ की फसल में पादप संरक्षण गेहूँ की फसल की तरह ही करना चाहिए जौ की फसल के रोगों एवं कीटों की समानता गेहूँ की फसल की तरह ही होती है।

कटाई एवं मढ़ाई (Harvesting and threshing) : जौ की फसल की कटाई मार्च अप्रेल में जब फसल के पौधे एवं बालियाँ सूख कर पीली या भूरी पड़ जाये तो कटाई कर लेनी चाहिए। अधिक पकने पर बालियाँ गिरने की आशंका अधिक हो जाती है। फसल की कटाई करने के बाद अच्छी प्रकार सूखा कर थ्रेसर द्वारा दाने को भूसे से अलग कर देना चाहिए।

उपज (Yield) : उन्नत विधि से खेती करने पर एक हेक्टेयर में 35–40 क्विंटल दाने की एवं 50–55 क्विंटल भूसे की उपज प्राप्त की जा सकती हैं। असिंचित क्षेत्र में 15–20 क्विंटल दाना व 25–30 क्विंटल भूसा प्रति हेक्टेयर प्राप्त होता है ।

6.2 दलहनी फसलें (Pulse Crops)

उड़द – (Black gram or Urd bean)
वानस्पतिक नाम –विग्ना मुंगो एल. (*Vigna mungo* L.)
कुल – फैबेसी (Fabaceae)

महत्व (Importance) : उड़द दाल के लिए उगाया जाता है दलहनी फसल होने के कारण वायुमण्डलीय नाइट्रोजन को मृदा में संचयन करने की क्षमता होती हैं। उड़द को पीसकर पापड़, विभिन्न व्यंजन भी बनाये जाते हैं। उड़द में 24 प्रतिशत प्रोटीन होती हैं। इसका चारा पशुओं के लिए पौष्टिक होता हैं। उड़द का उत्पति स्थान भारत वर्ष माना जाता है राजस्थान में इसकी खेती कोटा, उदयपुर खण्ड, सवाई माधोपुर, अलवर, भरतपुर जिलों में की जाती हैं।

जलवायु (Climate) : उड़द उष्ण कटिबन्धीय पौधा है, इसे आर्द्र एवं गर्म जलवायु की आवश्यकता होती है राजस्थान में इसकी खेती मुख्यतया वर्षा ऋतु में की जाती है 40–60 सेमी. वार्षिक वर्षा वाले क्षेत्र उड़द खेती के लिए उपयुक्त माने जाते हैं। पौधों की वृद्विके लिए 21°–30° सेल्सियस तापमान उपयुक्त मान जाता है।

मृदा (Soil) : उड़द की खेती के लिए अच्छे जल निकासयुक्त सभी प्रकार की मृदाएँ उपयुक्त हैं, लेकिन अच्छी उपज के लिए दोमट., चिकनी दोमट मृदा सर्वोतम रहती हैं, जिसका पी.एच. मान 7–8 के मध्य हो।

भूमि की तैयारी (Field preparation) : एक जुताई मिट्टी पलटलने वाले हल से तथा दो जुताई देशी हल से या हैरो से करके पाटा लगा कर खेत तैयार किया जाना चाहिए।

उन्नत किस्में (Improved varieties) : कृष्णा, टी–9, पन्तयू–19, पन्तयू–30, बरखा, जवाहर उड़द–2, एल.बी.जी. 20।

बीज दर एवं बीजोपचार (Seed rate and seed treatment) : उड़द की शुद्ध फसल के लिए 15–20 किग्रा तथा मिश्रित फसल के लिए 8–10 किग्रा. बीज प्रति हेक्टेयर की दर से आवश्यकता होती है। बुआई से पूर्व प्रति किलो बीज 3 ग्राम थायरम या 2 ग्राम कार्बेण्डाजिम से उपचारित करने के बाद अन्य दलहनों की तरह राइजोबियम कल्चर से उपचारित करके बुआई करनी चाहिए ।

बुआई का समय एवं विधि (Time of sowing and method) : फसल वर्षा प्रारम्भ होने पर 15 जून से 15 जुलाई के मध्य कर देनी चाहिए। उड़द की फसल की बुआई पंक्तियों में पक्ति से पंक्ति की दूरी 30 सेमी व पौधे से पौधे की दूरी 10–15 सेमी. पर एवं बीज को 4–5 सेमी. गहराई पर बोते हैं।

खाद एवं उर्वरक (Manure and fertilizer) : उड़द दलहनी फसल है इसके लिए नाइट्रोजन 20 किग्रा., फास्फोरस 60 किग्रा. व पोटाश 30 किग्रा. प्रति हेक्टेयर की दर से दी जाती है।

सिंचाई (Irrigation) : उड़द की फसल को कम पानी की आवश्यकता होती है। समय पर वर्षा न होने पर 2 सिंचाई की आवश्यकता होती है। विशेष कर पुष्पावस्था एवं दाने बनते समय खेत में उचित नमी होना अति आवश्यक हैं।

अन्तरा कृषि (Inter cropping) : फसल से खरपतवारों को नष्ट करने के लिए 15–30 दिन के बीच एक दो निराई गुडाई करनी चाहिए जिससे वायु संचार होने से पौधों की ग्रंथियों में क्रियाशील जीवाणुओं द्वारा वायु मण्डलीय नत्रजन एकत्रित करने में सहायता मिलती है । रासायनिक नियंत्रण हेतु खेत तैयार करते समय बुआई से पूर्व पेण्डीमिथलीन 3 लीटर या एलाक्लोर (लासो) 2 लीटर को 500 लीटर पानी में मिलाकर बोने के बाद व अंकुरण से पूर्ण भूमि में फ्लेटफेन नोजल युक्त पम्प से मिलायें।

पादप संरक्षण (Plant protection) : उड़द की फसल में पादप संरक्षण मूंग की फसल के समान ही होता है

कटाई एवं मढ़ाई (Harvesting and threshing) : उड़द की फसल किस्म के अनुसार 80–100 दिन में पक कर तैयार हो जाती है। जब 70–80 प्रतिशत फलियां पक जाती है तो कटाई कर ली जाती है। कटाई हँसिया/दाँतली से की जाती हैं। फसल को 6–7 दिन तक सुखाकर मढ़ाई कर लेते हैं। मढ़ाई थ्रेसर से करते हैं।

उपज (Yield) : उन्नत विधि से खेती करने पर 8–10 क्विंटल उपज प्रति हेक्टेयर प्राप्त होती हैं।

मूंग *(Greengram or Mungbean)*
वानस्पतिक नाम –विगना रेडियेटा एल. (*Vigna radiata L.*)
कुल – फैबेसी (Fabaceae)

महत्व (Importance) : राजस्थान में खरीफ की दालों में मूंग सर्वाधिक लोकप्रिय हैं। मूंग का उपयोग दाल के अलावा नमकीन, मिष्ठान, पापड़, बड़ी, आदि बनाने में किया जाता हैं। मूंग की फसल पशुओं के लिए हरा चारा तथा हरी खाद के लिए भी उगाई जाती है। दलहनी फसल होने के कारण यह राइजोबियम जीवाणुओं द्वारा वायुमण्डलीय नाइट्रोजन को मृदा में संचित करने की क्षमता रखती है जिससे मृदा की गुणवत्ता बढ़ती है। मूंग में 23 प्रतिशत प्रोटीन होती है। मूंग की दाल बहुत हल्की व शीघ्र पचने वाली होती है।मूंग की उत्पति स्थान भारत वर्ष है। राजस्थान में मूंग की खेती जोधपुर, बीकानेर, गंगानगर, हनुमानगढ़, भीलवाड़ा आदि जिलों में अधिक होती है।

जलवायु (Climate): राजस्थान में मूंग की फसल वर्षा तथा ग्रीष्म ऋतु में उगाई जाती है। यह शुष्क व गर्म जलवायु की फसल है। मूंग की खेती 20–40 सेमी. वार्षिक वर्षा वाले स्थानों पर सफलतापूर्वक की जा सकती है। मूंग की फसल के लिए अधिक वर्षा हानिकारक है। मूंग के लिए 25°–35° सेल्सियस तापमान उपयुक्त रहता हैं।

मृदा (Soil) : मूंग की फसल राजस्थान की सभी प्रकार की मृदाओं में उगाई जाती है लेकिन अच्छी फसल के लिए जल निकासयुक्त दोमट मृदा सर्वोत्तम होती हैं।

खेती की तैयारी (Field preparation) : ग्रीष्म कालीन फसल बोने के लिए गेहूँ की कटाई के बाद सिंचाई कर के एक–दो जुताई कर के खेत तैयार किया जाता है पाटा लगकर मिट्टी भुरभुरी व समतल कर बुआई की जाती है खरीफ में मूंग की खेती के लिए वर्षा होते ही एक–दो जुताई करके बुआई की जाती है।

उन्नत किस्में (Improved varieties) : के. 851, एम. यू.एम–2, आर.एम.जी. 62, आर.एम.जी. 268, आर.एम.जी 344 (धनु), एम.एल.267, एम.एल 131, गंगा–1, पूसा बैसाखी।

बीज दर (Seed rate) : मूंग की शुद्ध फसल बोने के लिए 15–20 किग्रा. बीज प्रति हेक्टेयर की आवश्यकता होती हैं मिश्रित फसल में बीज दर 8–10 किग्रा. प्रति हेक्टेयर प्रयोग की जाती हैं।

बीज उपचार (Seed treatment) : बुआई से पूर्व प्रति कि.ग्रा. बीज को 3 ग्राम थाइरम या 2 ग्राम कार्बेण्डाजिम से उपचारित करने के बाद राइजोबियम कलचर से उपचारित करें। सभी दलहनी फसलों के बीजों को राइजोबियम से उपचारित करने पर पैदावार अधिक मिलती है इसके लिए एक लीटर पानी में 250 ग्राम गुड़ गर्म करके घोल बनाएं तथा घोल के ठण्डा होने पर इसमें 600 ग्राम कल्चर मिलावें इस मिश्रण में बीज इस प्रकार मिलावें कि सभी बीजों पर इसकी परत एक सार चढ़ जाये। इसके बाद बीजों को छाया में सुखाकर शीघ्र बोने के काम में लेवें।

बुआई का समय एवं विधि (Time of sowing and method) : मूंग की बुआई 15 जुलाई से 30 जुलाई तक की जा सकती हैं जायद में मूंग की बुआई फरवरी मध्य से मार्च मध्य तक करना उपयुक्त रहता है। कतार से कतार की दूरी 30 सेमी. तथा पौधे से पौधे की दूरी 10 सेमी. तक रखनी चाहिए।

खाद एवं उर्वरक (Manure and fertilizer) : मूंग दलहनी फसल है इसके लिए 15–20 किग्रा. नाइ्रोजन, 30–40 किग्रा. फास्फोरस प्रति हेक्टेयर बुआई से पूर्व नायले से कर देवें तभी 250 किग्रा. जिप्सम प्रति हेक्टेयर बुआई से पूर्व देने से उपज में वृद्धि होती हैं।

सिंचाई (Irrigation) : जायद मूंग में आवश्यकतानुसार 8–10 दिन के अंतराल पर सिंचाई करनी चाहिए। फली बनते समय व दाना बनते समय पानी की कमी नहीं रहनी चाहिए। खरीफ की फसल में सिंचाई वर्षा पर निर्भर करती है।

अन्तरा कृषि (Inter cropping) : खरपतवार निकालने के लिए 30 दिन कि फसल में निराई व गुड़ाई कर देनी चाहिए।

रासायनिक खतरवार नियत्रंण हेतु 1 किग्रा. फ्लूक्लोरेलिन को 100 लीटर पानी में घोल कर प्रति हेक्टेयर की दर से बुआई से पहले छिड़काव कर भूमि मे अच्छी तरह मिला देना चाहिए।

पादप संरक्षण (Plant protection) : मोयला, सफेद मक्खी, फली छदेक,पत्ती बीटल के लिए मोनोक्रोटोफोस 36 डब्ल्यू.ई.सी. या मिथाइलडेमाटोन 25 ई.सी. 1.25 लीटर प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव करें। आवश्यक होने पर 15 दिन के अन्दर दोबारा छिड़काव कर देना चाहिए।

रोग–चित्ती जीवाणु रोग : इसके रोकथाम के लिए एग्रोमाइसीन 200 ग्राम या स्ट्रेप्टोसाइकिलीन 50 ग्राम को 500 लीटर पानी में घोल बनाकर प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव करें।

पीत शिरा मोजेक : यह रोग एक मक्खी के कारण होता है। इसके लिए मिथाइलडेमाटोन 0.25 प्रतिशत व मेलाथीयान 0. 1 प्रतिशत का घोल बनाकर छिड़काव करना चाहिए।

तना झुलसा रोग : बुआई के 30–35 दिन के बाद 2 किग्रा. मेन्कोजेब प्रति हेक्टेयर कि दर से 500 लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करना चाहिए।

सरकोस्पोरा पत्ती धब्बा रोग : इसके नियत्रंण के लिए कार्बेडाजिम 2 ग्राम या केप्टान 3 ग्राम प्रति किग्रा. बीज की दर से उपचारित कर बोना चाहिए, तथा फसल में 1 ग्राम प्रति लीटर पानी में घोल बना कर छिड़काव करना चाहिए।

पीलिया : इसके नियंत्रण हेतु गंधक का तेजाब या 0.5 प्रतिशत फेरस सल्फेट का छिड़काव करना चाहिए।

छाछिया रोग/चूर्णी फफूंद : इस रोग में पत्तियों के ऊपर सफेद गोलाकार चूर्ण जैसे धब्बे होते हैं। पत्ती छोटी रह कर पीली पड़ जाती हैं। नियंत्रण हेतु प्रति हेक्टेयर 2.5 किग्रा. घुलन शील गंधक या कैराथेन एक लीटर का पहला छिड़काव रोग के लक्षण दिखाई देने पर एंव दूसरा छिड़काव 10–15 दिन के अन्तर पर करें।

कटाई एवं मढ़ाई (Harvesting and threshing) : मूंग की फलियाँ जब पीली, काली पड़ने लगे तथा सूख जायें तो कटाई कर लेनी चाहिए, अधिक सूखने पर फलियाँ चटकने का डर रहता है। ग्रीष्म ऋतु की फसल की फलियाँ 2–3 बार पूरी तोड़ ली जाती है उसके बाद फर्श पर सुखाकर मढ़ाई कर दाना अलग कर लेना चाहिए या थ्रेसर द्वारा या डंडे द्वारा भी अलग किया जा सकता है ।

उपज (Yield) : मूंग की उपज 8–10 क्विंटल प्रति हेक्टेयर होती हैं। अच्छी तरह सुखाकर (8–10 प्रतिशत नमी) एवं स्वच्छ भण्डार गृह में रखना चाहिए।

मोठ (Moth bean)
वानस्पतिक नाम–विग्ना एकोनिटीफोलिया (जैक) (*Vigna aconitifolia*) (Jacq)
कुल– फैबेसी (Fabaceae)

महत्व (Importance) : खरीफ की दलहनी फसल है मोठ का पौधा मृदा कटाव को रोकने वाला होता हैं। मोठ की हरी फलियों की पौष्टिक सब्जी बनती है। तथा हरे पौधे चारे के रूप में काम आते है। मोठ का सूखा चारा स्वाद की दृष्टि से पशुओं द्वारा बहुत पसन्द किया जाता है। इसमें 18 से 22.5 प्रतिशत प्रोटीन पाया जाता है। मोठ सेवनी बीकानेरी भुजिया अपने स्वाद के लिए देश विदेश में प्रसिद्ध है। मोठ की दाल व दाल से बनी 'बड़ी' भोजन के रूप में काम ली जाती है। मोठ का उत्पति स्थान भारत है। राजस्थान में चूरू, बीकानेर, नागौर, जोधपुर और बाड़मेर मोठ उगाने वाले मुख्य जिले हैं।

जलवायु (Climate) : मोठ की फसल के लिए गर्म और शुष्क मौसम की आवश्यकता होती है इसमें सूखा सहन करने की क्षमता होने के कारण यह देश में कम वर्षा वाले क्षेत्रों में उगाई जाती हैं। मोठ फसल की बढ़वार व विकास के लिए औसतन 25°–30° से.ग्रे. तापमान उपयुक्त समझा जाता हैं।

मृदा (Soil) : मोठ की खेती के लिए बलुई दोमट, दोमट भूमि सर्वोतम होती है। भूमि में जल निकास की उचित व्यवस्था होनी चाहिए ।

भूमि की तैयारी (Field preparation) : मोठ की खेती के लिए पहली जताई मिट्टी पलटने वाले हल से या तवेदार हैरो चलाकर करनी चाहिए फिर एक क्रास जुताई हैरो एवं एक जुताई कल्टीवेटर से कर पाटा लगाकर भूमि समतल कर लेना चाहिए ।

उन्नत किस्में (Improved varieties) : आर.एम. ओ–40, आर.एम.ओ–225 (मरू वरदान), काजरी मोठ–1, काजरी मोठ–3, आर.एम.ओ–257, आर.एम.ओ–423, आर.एम. ओ–435 (मरू बहार), विकास, ज्वाला, जडिया ।

बीजदर एवं बीजोपचार (Seed rate and seed treatment) : मोठ की शुद्ध फसल के लिए 10 किग्रा. बीज प्रति हैक्टेयर चाहिए। मिश्रित फसल कें 4–5 किग्रा. प्रति हेक्टेयर। बीज बुआई से पूर्व स्टेप्टोसाइक्लिन 100 पी.पी.एम. पानी के घोल में 1 घण्टे तक भिगोने के बाद केप्टाफ 75 एसडी 2 ग्राम प्रति किग्रा. बीज की दर सें उपचारित करना चाहिए तथा बुआई पूर्व 0. 5 ग्राम थायोयूरिया प्रतिलीटर पानी घोल में या 5 ग्राम थायोयुरिया + 1 मिली. डी.एम.एस.ओ. प्रति 10 लीटर पानी में घोल बनाकर 4–5 घण्टे भिगोकर (सुखायें) इसके बाद राइजोबियम कल्चर से मूंग की तरह बीजोपचार कर बुआई करें।

बुआई का समय एवं विधि (Time of sowing and method) : मोठ की बुआई मानसून की वर्षा शुरू होने से लेकर 15 अगस्त तक की जा सकती हैं। बुआई कतारो मे करनी चाहिए। कतार से कतार की दूरी 45 सेमी. एवं पौधे से पौधे की दूरी 15–20 सेमी. रखनी चाहिए।

खाद एंव उर्वरक (Manure and fertilizer) : मोठ दलहनी फसल है। 10 किग्रा नाइट्रोजन एवं 30 किग्रा फास्फॉरस बुआई के समय देना चाहिए।

सिंचाई (Irrigation) : मोठ के लिये अधिक पानी की आवश्यकता नही है। वर्षा न होने पर 1–2 हल्की सिंचाई कर देनी चाहिए।

अत्तरा कृषि (Inter cropping) : मोठ की फसल 30 दिन की होने तक निराई गुड़ाई कर देनी चाहिए। मोठ की शुद्ध फसल में खरपतवार नियत्रंण हेतु बुआई से पूर्व 1 किग्रा. फ्लूक्लोरेलिन 1000 लीटर पानी में मिलाकर प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव कर मिट्टी में अच्छी प्रकार मिला देवें।

पादप संरक्षण (Plant protection) : कातरा कीट एंव चित्ती जीवाणु रोग, पीत शिरा मौजेक रोग, सूखा जड़ गलन रोग की रोकथाम के उपाय मूंग की फसल की तरह ही है।

कटाई व मढ़ाई (Harvesting and threshing) : मोठ की फसल अक्टूबर या नवम्बर के प्रथम सप्ताह में पक कर तैयार हो जाती है। फलियाँ फसल पकने पर भूरी तथा पौधा पीला पड़ जाये तो फसल काट लेनी चाहिए। अच्छी तरह सूखने के बाद थ्रेसर से दाने अलग कर लिये जाते हैं।

उपज (Yield) : मोठ की उन्नत खेती करने पर 6–8 क्विंटल दाने एंव 8–10 क्विंटल सूखा चारा प्रति हेक्टेयर उपज होती है।

अरहर – (Pigeon pea) (Red gram)
वानस्पतिक नाम–कैजानस केजान एल. *(Cajanus cajan L.)*
कुल – फैबेसी (Fabaceae)

महत्व (Importance) : दलहनी फसलों में अरहर का चने के बाद दूसरा स्थान है। अरहर की दीर्घकालीन प्रजातियों से 200 किग्रा. तक वायुमण्डलीय नाईट्रोजन का स्थीरकरण कर मृदा उर्वरक एवं उत्पादकता में वृद्धि करती है। अरहर में 20–21 प्रतिशत तक प्रोटीन पाई जाती है। अरहर की उत्पति कुछ विद्वानों के अनुसार शरत तथा कुछ विद्वानों के अनुसार अफ्रीका में नील नदी का उपरी शग है। राजस्थान में इसकी खेती मुख्यत: बांसवाड़ा, झालावाड़, धौलपुर, उदयपुर, चितौड़गढ़ व कोटा जिलों में होती है।

जलवायु (Climate) : आर्द्र एवं शुष्क दोनों प्रकार की गर्म जलवायु वाले क्षेत्रों में अरहर की खेती की जा सकती है। अरहर की खेती के लिये 75 से 100सेमी. वार्षिक वर्षा वाले क्षेत्र श्रेष्ठ हैं। पौधों पर फूल आते समय व फलियाँ बनते समय तेज धूप की आवश्यकता होती है। फसल पकते समय पाला पड़ना व तेज धूप वर्षा हानिकारक हैं।

मृदा व भूमि की तैयारी (Soil and field preparation) : अरहर के लिये जल निकास युक्त दोमट या चिकनी दोमट एवं कपास की काली मिट्टी उपयुक्त है। मृदा का पी एच मान 6.5 से 7.5 तक होना चाहिए। एक गहरी जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से करते हैं, तत्पश्चात दो से तीन जुताई हैरो या

कल्टीवेटर या देशी हल से करते हैं।

उन्नत किस्में (Improved Varieties) : शीघ्र पकने वाली किस्में पूसा 120, पुसा 855, पुसा 33, पुसा अगेती, प्रभात, आजाद, दुर्गा (आई.सी.पी.एल.–84031), प्रगति(आई.पी.एफ. –87), जाग्रती (आई.पी.एफ.–151) ।

मध्यम समय में पकने वाली किस्में : टाईप–21, जवाहर अरहर –4, आशा (आई.सी.पी.एल.– 87119) ।

देर से पकने वाली किस्में : बहार, पुसा–9 ।

हाइब्रिड किस्में : पी.पी.एच– 4, आई.सी.पी.एच.–8 ।

बीज एवं बीजोपचार (Seed rate and seed treatment) : अरहर में बीज किस्म एवं बुआई कें समय पर निर्भर करती है। अरहर की शुद्ध फसल के लिये 15 किग्रा. व मिश्रित के लिये 6–8 किग्रा. प्रति हेक्टेयर बीज की आवश्यकता होती है। कवक जनित रोगों के लिए ट्राइकोडर्मा 4 ग्राम प्रति किलो बीज की दर से उपचारित करते हैं। तत्पश्चात 4–5 मिली. क्लोरपायरीफॉस से प्रति किलो बीज को उपचारित करते है।

बीजो को राइजोबियम कल्चर से उपचारित करना : मूंग की फसल की तरह करें।

पादप संरक्षण (Plant protection) : कीट नियंत्रण – फल मक्खी, फली छेदक, पत्ती लपेटक हेतु क्युनालफॉस या इन्डोसल्फाकन 35 इसी 20 मिली., मोनोक्रोट्रोफॉस 30 WSC 11 मिली,. प्रति 10 लीटर पानी में घोलकर 1000 लीटर घोल प्रति हेक्टेयर का छिड़काव करना चाहिए।

रोग नियंत्रण : उखटा रोग व झुलसा कवक जनित रोग है, इसमें पौधे की जड़े काली पड जाती हैं। इसके लिये रोग प्रतिरोधी किस्म आशा , वी.एस.एम.आर. 175, वी.एस.एम.आर. 736 का चयन करना चाहिए। मौजेक में वाहक कीट नियंत्रण के लिये मेटासिस्टोक्स का छिड़काव करें।

कटाई मढ़ाई (Harvesting and threshing) : शीघ्र पकने वाली किस्मों की नवम्बर–दिसम्बर व देर से पकने वाली किस्मों की मार्च अप्रैल में कटाई की जाती है। कटाई हंसिये या गंडासे से 10 सेमी. उँचाई से की जाती हैं। फसल को एक सप्ताह सुखाकर पुलमैन थ्रैसर द्वारा या डण्डे से पिटाई करके दानों को भूसे से अलग कर लेते हैं।

उपज (Yield) : उन्नत विधि से खेती करने पर 15–20 क्विंटल दाना व 50–60क्विंटल लकड़ी प्रति हेक्टेयर प्राप्त होती हैं।

चंवला (लोबिया) (Cow pea)
वानस्पतिक नाम – विग्ना अंगुईकुलटा एल. (*Vigna unguiculata* L.)
कुल – फैबेसी (Fabaceae)

महत्व (Importance) : राजस्थान में चंवला की खेती दाने, हरी सब्जी खाद व हरे चारे के लिये की जाती है। इसके दानों में लगभग 23 प्रतिशत प्रोटीन होती है। इसकी उत्पति स्थान मध्य अफ्रीका मानते हैं। राजस्थान में चंवला की खेती अलवर, भरतपुर, जयपुर, श्रीगंगानगर, हनुमानगढ़, झालावाड़, झुंझुनू, आदि जिलों में होती है।

जलवायु (Climate) : चंवला ग्रीष्म तथा वर्षा ऋतु में उगाई जाने वाली फसल हैं। चंवला में सूखा व गर्मी सहन करने की क्षमता अधिक होती हैं। 70–100 सेमी. वार्षिक वर्षा वाले स्थान पर आसानी से उगाया जा सकता है। इसके लिये 31° से 37° सेल्सियस तापमान उपयुक्त रहता है।

मृदा एंव भूमि की तैयारी (Soil and field preparation) : इसके लिये जल निकास युक्त दोमट एंव हल्की दोमट उपयुक्त रहती है। वर्षा होते ही 1–2 जुताई कर पाटा चलाकर खेत तैयार कर लेते हैं।

उन्नत किस्में (Improved varieties) :– आर.एस.–9, सी.152, एफ.एस 68, आ.सी.19, जे.सी.5, एफ.टी.सी.27, आर.सी. 101, जेसी.10 ।

बीज दर एंव बीजोपचार (Seed rate and seed treatment) : चंवला की शुद्ध फसल 15–20 किग्रा. मिश्रित के लिये 8–10 किग्रा. चारे के लिये (ग्रीष्मकालीन) 25–30 किग्रा. बीज प्रति हेक्टेयर पर्याप्त है। बीज का बुआई से पूर्व 3 ग्राम थाइरम या कैप्टान प्रति किलो बीज की दर से उपचारित करना

चाहिए तत्पश्चात राइजोबियम शाकाणु (कल्चर) से बीज उपचारित कर बोना चाहिए।

बुआई का समय एवं विधि (Time of sowing and method) : चंवला की बुआई मानसुन की वर्षा शुरू होने से लेकर 30 जुलाई तक की जा सकती है। पंक्ति से पंक्ति की दुरी 30 सेमी. तथा पौधे से पौधे कि दूरी 10 सेमी. रखना चाहिए।

खाद एंव उर्वरक (Manure and fertilizer) : इसके लिये 30–40 किग्रा. फास्फोरस, 15–20 किग्रा. नाइट्रोजन प्रति हेक्टेयर की दर से बुआई के समय नायले से देना चाहिए।

सिंचाई (Irrigation) : वर्षा न होने पर 15–20 दिन के अन्तर पर 2 सिंचाई कर पुष्पावस्था व फलियाँ बनते समय पानी की कमी नही हो। ग्रीष्मकालीन फसल में आवश्यकतानुसार 8–10 दिन के अन्तर पर सिंचाई की जानी चाहिए।

अन्तरा कृषि (Inter cropping) : दाने वाली फसलों की निराई–गुड़ाई 25–30 दिन बाद कर देनी चाहिए। हरे चारे वाली फसल में निराई–गुड़ाई की कोई विशेष आवश्यकता नही होती है। खरपतवारों का रासायनिक नियंत्रण मूंग व मोठ की तरह करना चाहिए ।

पादप सरंक्षण (Plant protection) : चंवला की फसल मे मोयला का प्रकोप होने पर मैलाथियान (50 ईसी) 1 लीटर या फास्कोमिडोन 250 मिली. या 1 लीटर डाइमिथोएट 100 लीटर पानी मे घोलकर छिड़काव करें।

शुष्क मूल विगलन रोग : इस रोग मे पत्तिया पीली पड़ जाती है। रोकथाम के लिए क्विंटोजीन 8 कि.ग्रा प्रति हेक्टेयर का प्रयोग करें।

छछिया रोग / चुर्णी फूफंद : इसमें पत्तियाँ पर सफेद चूर्ण के धब्बें दिखाई देते हैं। रोग के निवारण हेतु 2.5 कि.ग्रा घुलनशील गंधक या केरेथान 1 लीटर घोल का छिड़काव रोग के लक्षण दिखाई देने पर कर देना चाहिए।

कटाई एवं मढ़ाई (Harvesting and threshing) : चंवला की फसल किस्मानुसार 70–100 दिनो मे पककर तैयार होती हैं। फलियों कों झड़कर गिरने से होने वाली हानि को रोकने के लिए फलियों के पूरी तरह पकने पर झड़ने से पूर्व अर्थात 70–80 प्रतिशत फलियाँ पकने पर हंसियें या दँताली से कटाई कर लेनी चाहिए और 8–10 दिन खलियान में सुखाकर डण्डे से पीटकर या थ्रसेर से दानो को अलग कर लेना चाहिए।

उपज (Yield) : वर्षा कालीन फसल से 5–8 क्विंटल, खरीफ फसल से 8–10 क्विंटल प्रति हेक्टेयर दाना तथा 100–150 क्विंटल हरा चारा प्रति हेक्टेयर उपज प्राप्त होती है।

चना – (Gram or chick pea)
वानस्पतिक नाम –साइसर ऐरेटिनम एल. (*Cicer arietinum* L.)
कुल – फैबेसी (Fabaceae)

महत्व (Importance) : चना रबी ऋतु मे उगायी जाने वाली भारतीय महत्वपूर्ण दलहन फसल है। विश्व के कुल उत्पादन का 70 प्रतिशत भारत में होता हैं। चने में 21 प्रतिशत प्रोटीन होता है। चने का उपयोग इसके दाने, दाने से बनी दाल के रूप में खाने के लिए किया जाता है। चने के दानों को पीस कर बेसन बनाया जाता है जिससे अनेक प्रकार के व्यंजन व मिठाइयाँ बनाई जाती हैं। डीकेन्डोल के अनुसार चने का जन्म स्थान भारतवर्ष है, राजस्थान में चने की खेती जयपुर, सीकर, अजमेर, भरतपुर, अलवर, झंझुनू, श्रीगंगानगर, हनुमानगढ़, बीकानेर सहित राज्य के सभी जिलों में की जाती है ।

जलवायु (Climate) : चना ठण्डी शुष्क जलवायु की फसल है। चना की खेती 65–95 सेमी. वार्षिक वर्षा वाले क्षेत्रो में की जाती है फसल में फूल आते समय वर्षा से भारी नुकसान होता है। सर्दी दीर्घ अवधि तक रहे उचित है, अधिक ठण्ड बढ़वार व पकते समय हानि कारक रहती है। फसल पकते समय उच्चताप की आवश्यकता है ।

मृदा एवं खेत की तैयारी (Soil and field preparation) : चने की खेती के लिए हल्की दोमट या दोमट मिट्टी अच्छी होती है। भूमि में जल निकास कि उचित व्यवस्था होनी चाहिए। भूमि अधिक क्षारीय नही (मृदा पी.एच.मान 7–8.5 तक) होनी चाहिए। फसल को दीमक व कटवर्म के प्रकोप से बचाने के लिए अन्तिम जुताई के समय क्यूनॉलफॉस (1.5 प्रतिशत) मिथाइल पैराथियान (2 प्रतिशत) 25 किग्रा. मात्रा को प्रति हेक्टेयर की दर से मिट्टी में अच्छी तरह मिला देना चाहिए।

उन्नत किस्में (Improved varieties) : आर.एस. 10, आर.एस. 11, बी.जी. 209 (पूसा 209), जी.एन.जी. 663 (बरदान), जी.एन.जी. 469 (सम्राट), बी.जी.362, जी.एन.जी. 1292, प्रताप चना–1 इत्यादि।

बीजदर एंव बीजोपचार (Seed rate and seed treatment) : चने की देशी किस्में की बुआई हेतु 60–80 किग्रा. बीज प्रति हेक्टेयर की आवश्यकता होती हैं।

बीजोपचार :

1. जिन क्षेत्रों में दीमक व भूमिगत कीटों का प्रकोप होता है वहाँ बीजों को क्लोरपायरीफॉस 20 ई.सी 800 मिली. का पानी में घोल बानकर 100 किग्रा. बीज की दर से बीज उपचार करना चाहिए।
2. जड़गलन व उखटा रोग रोकथाम हेतु बीजों को 6–10 ग्राम ट्राइकोडर्मा या कार्बेण्डाजिम 2 ग्राम या कार्बेण्डाजिम 1.5 ग्राम प्रति किग्रा. बीज दर से बीज को उपचारित करना चाहिए।
3. बीजो का शाकाणु संवर्ध या पी.एस.बी. कल्चर से उपचारित करने से उपज में वृद्धि होती है एवं जड़ों में वायुमण्डलीय नाइट्रोजन का संचयन होने से मृदा की उर्वरता बढ़ती है। इसके लिए 250 ग्राम गुड़ को 1 लीटर पानी में गर्म कर घोल ठण्डा होने पर उसमे 3 पैकट (750 ग्राम) राइजोबियम कल्चर व फॉस्फोरस घुलनशील जीवाणु को अच्छी प्रकार मिलाकर उसमे बीज उपचारित करना चाहिए उपचारित बीज को छाया में सुखाकर शीघ्र बुआई कर देनी चाहिए।

बुआई का समय एंव बुआई की विधि (Time of sowing and method) : असिंचित क्षेत्र में चने की बुआई अक्टूबर के प्रथम सप्ताह में कर देनी चाहिए। सिंचित क्षेत्र में चने की बुआई 30 अक्टूबर तक अवश्य कर देनी चाहिए। पंक्ति से पंक्ति की दूरी असिंचित 30 सेंमी. व सिंचित में 45 सेंमी. रखनी चाहिए, तथा बीज की गहराई 5–7 सेंमी. रखकर बुआई कर देनी चाहिए।

खाद एंव उर्वरक (Manure and fertilizer) : अच्छी उपज के लिए 2.5–3 टन गोबर की खाद या कम्पोस्ट भूमि तैयारी के समय बुआई से 15–20 दिन पूर्व अन्तिम जुताई पर भली प्रकार से मिला देना चाहिए। दलहनी फसल होने कारण नाइट्रोजन की कम आवश्यकता होती है। चने के पौधे की जड़ों में पाई जाने वाली ग्रन्थियों में उपस्थित जीवाणु वायुमण्डलीय नाइट्रोजन का जड़ों में स्थिरीकरण कर नाइट्रोजन की काफी मात्रा में पूर्ति कर लेते हैं, लेकिन प्रारम्भिक अवस्था में जड़ विकास के लिए 20 किग्रा. नाइट्रोजन, 40 किग्रा. फास्फोरस प्रति हेक्टेयर की दर से बुआई के समय खेत में ऊर कर देनी चाहिए।

सिंचाई (Irrigation) : चने की अधिकतर खेती बारानी क्षेत्रों में संचित नमी में की जाती है। यदि सिंचाई की सुविधा हो तो नमी की कमी होने पर या वर्षा के अभाव में एक दो सिंचाई की जा सकती है पहली सिचाई 40–50 दिन बाद तथा दूसरी सिंचाई फलियाँ आने पर करनी चाहिए।

अन्तरा कृषि (Inter cropping) : चने में निराई गुड़ाई करने से भूमि में वायु संचार बढता हैं, प्रथम निराई गुड़ाई बुआई के 25–30 दिन बाद करनी चाहिए आवश्यकता होने पर दूसरी निराई–गुड़ाई पहली निराई गुड़ाई के 20–25 दिन बाद करनी चाहिए।रासायनिक खरपतवार नियंत्रण हेतु बुआई से पूर्व आधा किग्रा. फ्लूक्लोरेलिन 750 लीटर पानी में घोलकर प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव करके भूमि में अच्छी तरह मिलाकर चने की बुआई करें।

पौधों की चुटाई : चने के पौधे जब 20–25 सेंमी. ऊँचे हो जाये हो तो उनकी शीर्ष शाखाएँ तोड़ने से शाखाएँ अधिक निकलती है, तथा फूल व फल अधिक लगते हैं। इससे पैदावार में वृद्धि होती है।

पादप संरक्षण (Plant protection) :

कीट एंव रोग नियंत्रण :

दीमक, कटवर्म एंव वायर वर्म : इनके नियंत्रण हेतु मिथाइल पेराथियान 2 प्रतिशत या क्यूनालफॉस 1.5 प्रतिशत चूर्ण की 25 किग्रा. मात्रा को प्रति हेक्टेयर की दर से भुरकाव सांयकाल करना चाहिए।

फली छेदक : इसके नियंत्रण हेतु फूल आने से पूर्व तथा फली लगने के बाद एण्डोसल्फान 4 प्रतिशत या क्युनालफॉस 1.5 प्रतिशत या मिथाइल पैराथियॉन 2 प्रतिशत चूर्ण की 25 किग्रा. मात्रा की प्रति हेक्टेयर की दर से बुरकनी चाहिए।

झुलसा रोग (ब्लाईट) : इसके लिए मैन्कोजेब फंफूदनाशी की 1 किग्रा. या घुलनशील गंधक 1 किग्रा या कॉपरआक्सी क्लोराइड की 1.30 किग्रा. मात्रा को 500 लीटर पानी में बनाकर छिडकाव करना चाहिये। 10 दिनों के अन्तराल पर 2–3 छिड़काव करने चाहिए।

उखटा रोग (विल्ट) : रोगरोधी किस्मे जैसे आर.एस.जी. 888ए, सी 235, बीजी 256 आदि की बुआई करनी चाहिए।

पाले से बचाव : इससे बचाने के लिए गंधक के तेजाब की 0.1 प्रतिशत मात्रा यानी एक लीटर गंधक के तेजाब को 1000 लीटर पानी में घोलकर छिडकाव करना चाहिए। खेत के चारो ओर धूआँ कर देना लाभदायक रहता है।

कटाई व मढ़ाई (Harvesting and threshing) : जब फसल पक कर तैयार हो जाती है तो हँसिये से फसल की कटाई कर ली जाती है। फसल को एक सप्ताह तक सुखाकर थ्रैसर या ट्रैक्टर से मढ़ाई कर दाने अलग कर लेते हैं। दानों को तेज हवा या बिनोवर चलाकर साफ कर लेते हैं।

उपज (Yield) : असिंचित क्षेत्रों में 8–12 क्विंटल व सिंचित क्षेत्रो में 15–20 क्विंटल प्रति हेक्टेयर होती है।

6.3 तिलहनी फसलें (Oil Seed Crops)

मूंगफली – (Groundnut)
वानस्पतिक नाम –अरेकिस हाइपोजिया एल. *(Arachis hypogea L.)*
कुल – फैबेसी (Fabaceae)

महत्व (Importance) : मूंगफली तिलहनी फसलों में एक महत्वपूर्ण स्थान रखती हैं। मूंगफली का उपयोग कई प्रकार से किया जाता है जैसे तेल, बीज, घरेलू उपयोग एवं निर्यात। यह खाद्य तेल का बहुत ही अच्छा स्रोत हैं। दानों में 48–55 प्रतिशत तेल, 27 प्रतिशत प्रोटीन व 10–21 प्रतिशत कार्बोहाइड्रेट पायी जाती है। इसके तेल का उपयोग सौन्दर्य प्रसाधनों, साबुन क्रीम आदि में किया जाता है। मूंगफली का उत्पत्ति स्थान अधिकांश विद्वानों के अनुसार (दक्षिणी अमेरिका है कुछ विद्वान ब्राजील को मानते हैं। राजस्थान में मूंगफली की खेती चित्तौड़गढ, सवाई माधोपुर, जयुपर, टोंक, बीकानेर, सीकर, झुंझुनू आदि जिलों में की जाती हैं। राजस्थान में 8 लाख टन उत्पादन, क्षेत्रफल 4.14 लाख हेक्टेयर।

जलवायु (Climate) : मूंगफली उष्णकटिबंधीय जलवायु का पौधा होने के कारण इसे लम्बे एवं गर्म मौसम की आवश्यकता होती है। उत्तरी भारत व राजस्थान में मूंगफली की खेती खरीफ ऋतु में की जाती है। मूंगफली को 50–100 सेमी. वार्षिक वर्षा वाले क्षेत्रों में उगाया जा सकता है। इसकी वृद्धि के समय 27^0–30^0 सेल्सियस तथा प्रजनन के लिए 24^0–27^0 सेल्सियस तापमान उपयुक्त होता है। राजस्थान में कम वर्षा वाले क्षेत्रों में सिंचित फसल के रूप उगाई जाती है। फूल आने के बाद पौधों को पर्याप्त नमी व प्रकाश मिलते रहना चाहिए।

मृदा (Soil) : मूंगफली के लिए अच्छे जल निकास युक्त बलुई, बलुई दोमट मृदा श्रेष्ठ रहती है। मृदा का पी.एच. मान 6–8.5 होना चाहिए ।

खेत की तैयारी (Field preparation) : मूंगफली जमीन के अन्दर लगती है। इसलिए बोने से पहले 2–3 बार अच्छी गहरी जुताई करनी चाहिए और पाटा चलाकर मिट्टी भुरभुरी कर लेनी चाहिए भूमिगत कीटो को नष्ट करने के लिए अन्तिम जुताई के समय 25 किग्रा. मिथाइल पैराथियान 2 प्रतिशत या क्युनालफॉस 1.5 प्रतिशत प्रति हेक्टेयर प्रयोग करना चाहिए ।

उन्नतशील किस्में (Improved varieties) : मूंगफली के आकार प्रकार के अनुसार किस्मों को तीन वर्गो मे बाँट सकते हैं–

I. **झुमका या गुच्छेदार :** इस वर्ग के पौधे भूमि से ऊपर सीधे गुच्छो मे बढ़ते है। फलियाँ मुख्य जड़ के पास ही लगती है। दाना गुलाबी या लाल रंग का होता है तथा जल्दी पकने वाली होती है। इनकी उपज फैलने वाली किस्मों से कम होती है। ये भारी मृदाओ के लिए उपयुक्त होती है

II. **विस्तार :** इन पौधो की शाखायें जमीन के समानात्तार फैलती हैं। मूंगफली दूर–दूर लगती है दाना मोटा तथा भूरे रंग का होता है पकने में समय अधिक लगता है। ये किस्में रेतीली व दोमट मृदाओ के लिए उपयुक्त होती हैं।

III. **अर्द्ध विस्तारी :** इन पौधो की शाखायें कम फैलने वाली होती हैं यह गुच्छेदार व विस्तारी के बीच की किस्में हैं। यह मध्यम उपज देने वाली होती हैं।

राजस्थान के लिए उपयुक्त किस्मे निम्न प्रकार है –ए.के. 12–24, ए.एच–114, जी.जी.2, जी.जी.20, गिरनार –2 (पी.बी. एस 24030), एच.एन.जी.10, एच.एन.जी.123, जे.एल.24, एम.13, प्रताप मूंगफली आर.जी–141, आर.जी.382 (दुर्गा), आर.जी.425 (राज.दुर्गा), आर.जी. 510, आर.एस.बी 87, टी.ए.जी.–24, टी.जी. –37 ए , टी.बी.जी.39, टी.जी.39 ।

बीज दर एवं बीजोपचार (Seed rate and seed treatment) : मूंगफली का बीज 80 से 100 किग्रा प्रति हेक्टेयर की दर पर्याप्त होता है। बीज का दाना (गुली) 10–12 दिन पूर्व निकालना चाहिए। बीजोपचार के लिए प्रति किलो बीज 3 ग्रा. क्लोरोथेलीनील या 6–10 ग्राम ट्राइकोडर्मा से इस के बाद प्रति किलो बीज 25 मिली क्लोरोपायरीफॉस 20 ईसी से तथा अंत में प्रति हेक्टेयर बीजों के लिए राइजोबियम व पीएसबी कल्चर प्रत्येक के 3 पैकेट से उपचारित करे।

बुआई का समय एवं बुआई की विधि (Time of sowing and sowing method) : मूंगफली की अगेती बुआई 15–20 जून, समय पर बीजाई 20 जून से 15 जुलाई पिछेती बुआई जुलाई 31 तक। मूंगफली की बुआई कतारों में फैलने वाली किस्म की पंक्ति से पंक्ति की दूरी 40–45 सेमी. तथा पौधे से पौधे की दूरी 15 सेमी. तथा गुच्छेदार किस्म की पंक्ति से पंक्ति की दूरी 30 सेमी. तथा पौधे से पौधे की दूरी 10 सेमी. होनी चाहिए। बीज की गहराई 5–7 सेमी. रखनी चाहिए।

खाद एवं उर्वरक (Manure and fertilizer) :

1. बुआई से 4 सप्ताह पूर्व प्रति हेक्टेयर 10–15टन गोबर की सड़ी हुई खाद या कम्पोस्ट खाद का प्रयोग करे।
2. बुआई से पूर्व प्रति हेक्टेयर 30–50 किग्रा यूरिया या 75 किग्रा अमोनियम सल्फेट 310–375 किग्रा एसएसपी, 40–80 किग्रा एमओपी तथा 25 किग्रा जिंक सल्फेट का उपयोग करें। सिंचाई के बाद आवश्यकतानुसार यूरिया का उपयोग करें। अंतिम जुताई से पूर्व प्रति हेक्टेयर 250 किग्रा जिप्सम की भी सिफारिश की जाती है क्योंकि कैल्शियम की कमी से मूंगफली के दानों का भराव ठीक से नहीं होता है मृदा परीक्षण के आधार पर बोरोन उर्वरक का भी प्रयोग करें क्योंकि इसकी कमी से मूंगफली के दानों के भीतर खाली स्थान रह जाता हैं। जिसे होलोहर्ट के नाम से जाना जाता है ।

सिंचाई (Irrigation) : मूंगफली ग्रीष्मकालीन फसल होने के कारण आवश्यकतानुसार सिंचाई करें। फूल आने के समय नमी आवश्यक है। वर्षा न होने (सूखा पड़ने) पर 1–2 सिंचाई करनी चाहिए। प्रथम सिंचाई बुआई के 3–4 सप्ताह पर देवें एवं अंतिम सिंचाई अक्टूबर के अंतिम पखवाड़े तक फसलावस्था अनुसार पूरी कर लें।

अंतरा कृषि (Inter cropping) : यदि खेत में खरपतवार हो तो 1–2 निराई गुड़ाई कर खरपतवार निकाल देने चाहिए। अन्तिम निराई गुड़ाई 30–40 दिन तक कर देनी चाहिए उसके बाद नहीं करनी चाहिए। फसल में सुइयाँ (अधिकीलन की किया) बनना प्रारम्भ होने के बाद निराई–गुड़ाई नहीं करनी चाहिए। घास कुल के खरपतवारों के प्रभावी नियंत्रण हेतु मूंगफली की खड़ी फसल में बुआई के 20–25 दिन बाद क्यूनॉलफास 5 प्रतिशत ईसी की 1000 मिली. दवा प्रति हेक्टेयर की दर से 500 ली. पानी में घोल बनाकर छिड़काव करें। रेतीली भूमि के अलावा अन्य भूमियों में 30–40 दिन में जड़ों पर मिट्टी चढ़ा देनी चाहिए।

पादप संरक्षण (Plant protection) : कीट–दीमक, सफेद लट, लाल भडूली, सुरंग बनाने वाले कीट, माइट आदि मूंगफली की फसल को हानि पहुँचाते है। इनके नियंत्रण के लिए प्रति किलो बीज में 4 मिली क्लोरोपाइरीफॉस 20 ईसी दवा मिला कर उपचार करें एवं अन्य कीटों के लिए 300 मिली. मिथाइल डेमेटोन 25 ईसी या 600 मिली. फॉस्फोमिडोन 40 ईसी को 250 लीटर पानी में मिलाकर प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव करें।

रोग : उखटा, रोजेट रोग, चित्तीदार रोग, टिक्का रोग, किट्ट रोग, जड़ गलन, अंगमारी, कालर गलन आदि से हानि होती हैं। नियंत्रण के लिए 4 किग्रा. ट्राइकोडर्मा हरजेनियम प्रति हेक्टेयर की दर से 50–60 किलो गोबर की खाद में मिलाकर 15 दिन छाया में रखकर बुआई के समय भूमि में मिला दें। जड़ गलन के लिए 100 किग्रा. म्यूरेट आफ पोटाश एवं 60 किग्रा. जिंक सल्फेट को बुआई से पूर्व भूमि में मिलाना भी लाभप्रद रहता है। टिक्का रोग में पौधों पर मटियाले रंग या भूरे गहरे रंग के दाग पड़ जाते हैं। इसके नियत्रंण के लिए आधा ग्राम कार्बेण्डाजिम प्रति लीटर पानी के घोल का या 1.5 किग्रा मैन्कोजेब का प्रति हेक्टेयर छिड़काव करें। इसके बाद 10–15 दिन के अन्तराल पर दो बार छिड़काव और करें।

छछिया रोग के लिए 3 वर्ष में एक बार 300 किग्रा. गंधक या हरा कसीस प्रति हेक्टेयर बुआई पूर्व प्रयोग करे या फसल में फूल आने से पहले गंधक अम्ल का 0.1 प्रतिशत घोल का छिड़काव दो बार करें।

कटाई (Harvesting) : मूंगफली के पकने का समय अक्टूबर 31 से 15 नवम्बर तक है जब 75 प्रतिशत फलियाँ पक जावे एवं पतियाँ पीली पड़ जाये तो खुदाई कर लेनी चाहिए। खुदाई से पहले कई स्थानों से पौधे उखाड़ कर जाँच कर लें। खुदाई से पूर्व हल्की सिंचाई कर दे जिससे फलियाँ टूट कर जमीन में नहीं रहती है खुदाई के बाद 7–10 दिन तक सुखाकर फली व पत्तियाँ अलग कर लेते हैं।

उपज (Yield) : गुच्छेदार किस्मों से 12–15 क्विंटल फैलने वाली किस्मों से 18–20 क्विंटल प्रति हेक्टेयर उपज प्राप्त होती हैं। सिंचित क्षेत्रों में 20–40 क्विंटल प्रति हेक्टेयर उपज मिलती है। फलियों के अलावा 30–35 क्विंटल प्रति हेक्टेयर सूखा चारा भी प्राप्त होता है ।

तिल – (Sesame)
वानस्पतिक नाम –सिसेमम इन्डिकम एल.
(Sesamum indicum L.)
कुल – पेडिलिएसी (Pedaliaceae)

महत्व (Importance) : तिल एक महत्वपूर्ण फसल है, इसे तिलहन फसलों की रानी कहा जाता है। तिल के बीजों का प्रमुख उपयोग तेल तैयार करने तथा कुल उत्पादन का 20 प्रतिशत भाग बीज के रूप में खाने के काम आता है। तिल के बीजों का प्रयोग शक्कर के साथ मिलाकर तिलकुटा, रेवड़ी, गजक, आदि बनाने मे किया जाता है। तिल के बीजों में 44–54

प्रतिशत तक तेल होता है। तेल में सीसेमोल नामक पदार्थ की उपस्थिति के कारण इसे लम्बे समय तक सुरक्षित रखा जा सकता है। तिल की खल पशुओं के लिए पौष्टिक आहार है, इसे खाद के रूप में प्रयोग किया जाता है। उत्पति के बारे में अधिकांश विद्वान अफ्रीका तथा कुछ भारतवर्ष मानते है । राजस्थान में तिल की खेती चित्तौड़गढ, सवाई माधोपुर, उदयपुर, जोधपुर, पाली, नागौर, जालौर, टोंक, भीलवाड़ा, अजमेर जिले प्रमुख हैं।

जलवायु (Climate) : तिल उष्ण कटिबंधीय जलवायु की फसल है तिल के लिए उपयुक्त तापमान 25°–27° सेल्सियस होता है यह 50–60 सेमी. वार्षिक वर्षा वाले क्षेत्रों में खरीफ ऋतु में बोई जाती है। अधिक वर्षा एवं 20° सेल्सियस से नीचे तापमान उपयुक्त नहीं है लेकिन अंकुरण करने के लिए पर्याप्त नमी की आवश्यकता होती है।

मृदा एवं खेत की तैयारी (Soil and field preparation) : तिल की अच्छी फसल हेतु रेतीली दोमट मृदा जिनका पी.एच मान 6–8 के मध्य हो उपयुक्त होती है जिसमें जल निकास की समुचित व्यवस्था हों। लवणीय व क्षारीय मृदा इसके लिए अच्छी नही हैं। यदि समय पर वर्षा न हो तो खेत मे सिंचाई करना आवश्यक है अन्यथा मानसून की पहली वर्षा आते ही एक दो जुताई देशी हल या हैरो से अच्छी प्रकार करके भूमि को पाटा लगा कर समतल व भुरभुरी कर लेते हैं।

उन्नत किस्में (Improved varieties) : टी.सी.25, प्रताप (सी–50), आर.टी.–46, आर.टी.–125, आर.टी.–127, प्रगति (एन.टी 175), आर.टी.–346।

बीज दर एवं बीजोपचार (Seed rate and seed treatment) : तिल की शाखायुक्त किस्मों का बीज 2–2.5 किग्रा. बीज प्रति हेक्टेयर तथा शाखा रहित 4–5 किग्रा. प्रति हेक्टेयर की आवश्यकता होती है बीज जनित रोगों से बचाने के लिए बुआई से पूर्व बीज को 2 ग्राम कार्बोण्डाजिम प्रति मिली. बीज की दर से उपचारित करें। जीवाणु अंग मारी से बचाने हेतु स्ट्रेप्टोसाइकिलीन/1 ग्राम 10 लीटर पानी में घोलकर, घोल में बीजों को 15–20 मिनट तक भिगोये व छाया में सुखाकर बुआई करें।

बुआई का समय एवं विधि (Time of sowing and method) : तिल की बुआई 15 जून से 15 जुलाई तक कर देनी चाहिए। देर से बुआई करने पर उपज कम होती है। तिल की बुआई हल के पीछे कतारों में 30 सेमी. की दूरी पर 3–4 सेमी. गहराई पर बुआई करनी चाहिए। कतारों में पौधे से पौधे की दूरी 10–15 सेमी. रखते है। तिल की बुआई छिटकवाँ विधि से भी की जाती है।

खाद एवं उर्वरक (Manure and fertilizer) : तिल की अच्छी उपज के लिए 8–10 टन गोबर की खाद या कम्पोस्ट खाद बुआई से 1 माह पूर्व भूमि में मिला दें तथा निश्चित वर्षा वाले क्षेत्रों में 40 किग्रा. नाइट्रोजन 30 किग्रा. फॉस्फोरस पर्याप्त रहता है।

सिंचाई (Irrigation) : तिल में यदि समय पर वर्षा न हो तो फूल आते समय एक हल्की सिंचाई करना लाभदायक रहता है।

अन्तरा कृषि (Inter cropping) : (निराई–गुड़ाई) फसल की बुआई के लगभग 25–30 दिन बाद खरपतवार अवश्य निकाल देना चाहिए। रासायनिक नियंत्रण के लिए प्रति हेक्टेयर 0.75 किग्रा. फ्लूक्लोरोलिन 1000 लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करे।

पादप संरक्षण (Plant protection) : कीट–तिल में पत्ती छेदक,लट, लीफ रोलर, कैप्सूल बोरर व जेसिड कीट का प्रकोप होता है। जिनके नियंत्रण हेतु 25 किग्रा. मिथाईल पैराथियान 2 प्रतिशत चूर्ण प्रति हेक्टेयर का बुरकाव करें या 1. 5–2 मिली. मोनोक्रोटोफास 36–एस.एल. को प्रति लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव 15 दिन के अन्तर पर करें ।

रोग : मुख्य रोगों में झुलसा एवं अंगमारी, छाछिया, जड़ व तना गलन एवं पत्तियों के धब्बा रोग लगते हैं। झुलसा एवं अंगमारी के नियत्रंण हेतु मैन्कोजेब 2 ग्राम का प्रति लीटर पानी की दर से छिड़काव करें। छाछिया रोग नियंत्रण हेतु प्रति हेक्टेयर 15–20 किग्रा. गंधक चूर्ण का बुरकाव करें ।

कटाई (Harvesting) : फसल पक कर पीली पड़ जाये तो हँसिये से काटकर छोटे छोटे बण्डल बाँध ले व सूखने पर उल्टाकर बीज निकालें।

उपज (Yield) : उन्नत कृषि विधियाँ अपनाकर प्रति हेक्टेयर 6–8 क्विंटल तक पैदावार ली जा सकती है ।

सोयाबीन – (Soybean)

वानस्पतिक नाम –ग्लाइसिन मैक्स एल. (Glycine max L.)

कुल– फैबेसी (Fabaceae)

महत्व (Importance) : सोयाबीन एक बहुगुण सम्पन्न दलहनी एवं तिलहनी फसल है। इसके बीज में 40–43.5 प्रतिशत प्रोटीन, 19–20 प्रतिशत वसा पाया जाता है। इसका दूध रासायनिक विश्लेषण की दृष्टि से गाय के समान होता है। एन्टी बायोटिक पैदा करने वाले जीवाणुओं के लिए सोयाबीन एक मनपसन्द भोजन सिद्ध हुआ है। वनस्पति घी बनाने के लिए इसका तेल उपयोगी है। इसकी उत्पति स्थान के विषय में निश्चित नहीं है परन्तु उत्तरी चीन का पूर्वी भाग माना जाता है। राजस्थान के कोटा, बूंदी, झालावाड़, चितौड़गढ, बांसवाड़ा, बारा जिलों में मुख्यतः की जाती है।

जलवायु (Climate) : सोयाबीन गर्म व तर जलवायु की फसल है। 65–125 सेमी. वार्षिक वर्षा वाले क्षेत्रों में इसकी उत्तम खेती होती हैं।सोयाबीन को अंकुरण के समय 15°–32° सेल्सियस तापमान की आवश्यकता होती है वृद्धि के लिए 25°–30° सेल्सियस तापमान उपयुक्त रहता है। 40° सेल्सियस से अधिक तापमान का फसल वृद्धि व बीज गुणवत्ता पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। सोयाबीन अल्प प्रकाशक्षेपी पौधा है। अधिकांश किस्मों मे दिन की अवधि 14 घण्टे से कम होने पर अच्छे फूल आते है। फूल आने के समय भूमि मे पर्याप्त नमी होनी चाहिए अन्यथा फूल फलियाँ झड़ जाती हैं।

मृदा एंव खेत की तैयारी (Soil and field preparation) : सोयाबीन के लिए जल निकास युक्त दोमट व काली कपास वाली मृदा (Black Cotton Soil) उपयुक्त पायी गई है। इसके लिए उदासीन मृदा जिसका पी.एच.मान 6.5–8.5 हो उपयुक्त होती है यह फसल लवणीय तथा क्षारीयता के प्रति मध्यम रूप से सहनशील है, लेकिन अम्लीय मृदा हानिकारक है। खेत की तैयारी के लिए एक गहरी जुताई ग्रीष्मकाल में मिट्टी पलटने वाले हल से तथा मानसून की पहली वर्षा होने पर 2–3 जुताई हैरो या कल्टीवेटर से करके पाटा लगाकर अच्छी तरह तैयार कर लेना चाहिए। आखिरी जुताई से पूर्व फोरेट 10 जी दाने दार चूर्ण 10 किग्रा. प्रति हेक्टेयर या 25 किग्रा. मिथाईल पैराथियोन 2 प्रतिशत चूर्ण प्रति हेक्टेयर की दर से मिला देना चाहिए।

उन्नत किस्में (Improved varieties) : जे.एस.93–05, जे.एस.97–52, जे.एस. 335, एम.ए.यू.एस. 81, एन.आर.सी.12 (अहिल्या–3), एन.आर.सी.37(अहिल्या– 4),पी.के.472, पी.के. 1024, प्रताप सोया–1, प्रताप सोया–2, प्रताप राज. सोया–3, आर.के.एस–45 (प्रताप सोया–45), प्रतिष्ठा, गौरव, मोनेरा ।

बीज दर एवं बीजोपचार (Seed rate and seed treatment) : बीज की मात्रा किस्मानुसार रहती है, छोटे दाने वाली किस्म का 75–90 किग्रा. प्रति हेक्टेयर, मध्यम दाने वाली किस्में 40–45 किग्रा. प्रति हेक्टेयर, बड़े दाने वाली 75–90 किग्रा. प्रति हेक्टेयर से बीज पर्याप्त रहता हैं।

सोयाबीन के अंकुरण को बीज तथा मृदा जनित रोग से बचाने के लिए बीज को थाइरम या कैप्टान 2 ग्राम, कार्बेण्डाजिम या थायोफिनेट मिथाइल 1 ग्राम मिश्रण प्रति किग्रा. बीज की दर से उपचार करना चाहिए। अन्यथा ट्राईकोडर्मा 4 ग्राम, कार्बेण्डाजिम 2 ग्राम प्रति किग्रा. बीज की दर से उपचारित करके बोयें।

फफूंद नाशक दवाओं से बीजोपचार के बाद बीज को 5 ग्राम राइजोबियम एवं 5 ग्राम पी.एस.बी. कल्चर प्रति किग्रा. बीज की दर से उपचारित करें। उपचारित बीज को छाया में रखना चाहिए एवं शीघ्र बुआई कर देनी चाहिए।

बुआई का समय एवं विधि (Time of sowing and method) : सोयाबीन की बुआई असिंचित क्षेत्र में वर्षा आरम्भ होते ही एंव सिंचित क्षेत्र में 15 जून से 10 जुलाई उपयुक्त रहती है। बुआई कतारों में कतार से कतार की दूरी 30–45 सेमी. एंव पौध से पौधे की दूरी 10–15 सेमी. की दूरी पर करनी चाहिए।

खाद एंव उर्वरक (Manure and fertilizer) : बुवाई से 1 माह पूर्व प्रति हेक्टेयर 10 टन गोबर की सड़ी हुई खाद या कम्पोस्ट खाद का प्रयोग करें। बुआई के समय प्रति हेक्टेयर 250 किग्रा. सिंगल सुपर फास्फेट, 45 किग्रा. यूरिया तथा 70–80 किग्रा. म्युरेट आफ पोटाश का उपयोग करें। बुआई के 30–35 दिन बाद एक–दो पौधा उखाड़ कर देखे यदि जड़ों में ग्रथियाँ न बनी हो तो 45 किग्रा. यूरिया का उपयोग फूल आने से 7 दिन पहले करें जिंक की कमी होने पर प्रति हेक्टेयर 25 किग्रा. जिंक सल्फेट का प्रयोग करें। मृदा परीक्षण के आधार पर बोरॉन उर्वरक का भी प्रयोग करें। क्योंकि इसकी कमी से सोयाबीन के दानों के भीतर खाली स्थान रह जाता है, जिसे 'होलो हर्ट' के नाम से जाना जाता है।

सिंचाई (Irrigation) : सोयाबीन की फसल वैसे तो बिना सिंचाई के वर्षाकाल में उगाई जाती है फिर भी वर्षा न होने पर 1–2 सिंचाई आवश्यकता अनुसार कर देनी चाहिए, विशेष कर फूल व फलियाँ बनते समय भूमि में नमी की कमी नही होनी चाहिए। फूल आने के बाद सिंचाई या वर्षा फसल के लिए हानिकारक होती है।

अन्तरा कृषि (Inter cropping) : सोयाबीन की फसल में दो बार निराई–गुड़ाई कर खरपतवार निकाल देना चाहिए। पहली निराई गुड़ाई 25–30 दिन पर व दूसरी निराई गुड़ाई 40–45 दिन पर करें खरपतवार नाशी रसायनों का प्रयोग भी

किया जा सकता है।

पादप संरक्षण (Plant protiction) :

कीट – फडका, तना छेदक, पत्ती छेदक के नियत्रण के लिए मिथाइल पैराथियान 2 प्रतिशत या क्यूनालफॉस 500–700 मिली. को 500–700 लीटर पानी में घोलकर छिड़ाकाव करें। हरातेला, गर्डल वीटल (चक्र मृग) के लिए डाईमिथोएट 30 ई.सी. या मिथाइल डिमेटोन 25 ई.सी 400–600 मिली. दवा को 400–600 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें आवश्यक हो तो, 15–20 दिन बाद पुनः छिड़काव करें। तथा बुआई के 30–35 दिन पर डाइमिथोएट 30 ई.सी. 1 लीटर या एण्डोसल्फॉन 35 ई. सी. एक लीटर को पानी में घोलकर छिड़काव करें तथा एक सप्ताह बाद फिर से छिड़काव करें। नीम बीज का घोल 5 प्रतिशत 15 कि.ग्रा. घोल बना कर पहला छिड़काव 25–30 दिन पर व दूसरा छिडकाव 40–45 दिन पर करें।

रोग– छाछिया रोग के लिए फसल में पीला पन दिखाई देते ही 0.1 प्रतिशत गंधक का तेजाब या 0.5 प्रतिशत फेरस सल्फेट का छिड़काव करें।

पत्ती धब्बा, पत्तीगलन रोग की रोकथाम के लिए मैन्कोजेब के 0.2 प्रतिशत या थायोफेनेट मिथाइल 70 डब्ल्यू पी 0. 05–0.1 प्रतिशत से 1 ग्राम दवा प्रति लीटर पानी का छिड़काव करें। पुनः 15–20 दिन बाद दूसरा छिड़काव करें।

जड़गलन रोग की रोकथाम के लिए 6–10 ग्राम ट्राईकोडर्मा का प्रति किग्रा. बीज की दर से बीजोपचार कर बुआई करें। जीवाणु अगंमारी के लिए स्ट्रप्टोसाइक्लीन या कासूगामकइसिन की 200 पी.पी.ए. (200 मिग्रा. दवा प्रति लीटर पानी के घोल) और कॉपर आक्सीक्लोराइड 0.2 (2 ग्राम प्रति लीटर पानी के घोल) का मिश्रण प्रयोग करना चाहिए। इसके लिए 10 लीटर पानी में 1 ग्राम स्ट्रप्टोसाइक्लीन एंव 20 ग्राम कापर स्ट्रप्टोसाइक्लीन दवा का घोल बनाकर उपयोग करें।

कटाई एवं मढ़ाई (Harvesting and threshing) : जब फसल की अधिकाश पत्तियाँ सूखकर झड़ने लगे और 10 प्रतिशत फलियाँ सूखकर भूरे एंव पीले पर्ण में बदलने लगे तो उस समय हँसिया से कटाई कर लेते हैं। एक सप्ताह सूखाकर जब दाने मे नमी की मात्रा 13–15 प्रति हो जाये तब डण्डे से पीटकर या बैलो से दांय चलाकर (कुचलकर) या ट्रैक्टर से कुचलकर बीजों को अलग कर लिया जाता है।

उपज (Yield) : सोयाबीन की औसत उपज सिंचित क्षेत्र में 25–30 क्विटंल एंव असिंचित क्षेत्रों में 10–15 क्विटंल प्रति हेक्टेयर प्राप्त होती है एंव 30–35 क्विंटल सूखा चारा भी प्राप्त हो जाता है।

सूरज मुखी – (Sun flower)

वानस्पतिक नाम –हेलिएन्थस एनुअस एल. (*Helianthus annuus* L.)

कुल – एस्टरेसी (Asteraceae)

महत्व (Importance) : सूरज मुखी खाद्य तेल वाली एंव सभी मौसम में उगने वाली फसल है। इसमें तेल की मात्रा 45–50 प्रतिशत तक होती है। सूरज मुखी का तेल उच्च कोटि का होता है इसके तेल का रंग हल्का पीला और स्वाद अच्छा होता है इसके तेल में लिनोलिक अम्ल की मात्रा अधिक होने के कारण यह रक्त में कोलेस्ट्राल की वृद्धि को रोकने व उस पर अपचायक प्रभाव डालने में सहायक के होता है इसका उत्पत्ति स्थान पश्चिम केन्द्रीय अमेरिका है। राजस्थान में सूरज मुखी की खेती झालावाड़, भरतपुर, श्रीगंगानगर, हनुमानगढ व भीलवाड़ा आदि जिलों में की जाती है।

जलवायु (Climate) : सूरज मुखी की खेती खरीफ, रबी, जायद तीनों मौसम में की जा सकती है।फसल पकते समय शुष्क जलवायु की अति आवश्यकता होती है। वैसे सूरजमुखी समशीतोष्ण एवं शीतोष्ण जलवायु का पौधा है। सुरजमुखी धूप में ऑक्सिन–सांद्रता के कारण तना तथा मुण्डक सुर्य की तरफ मुड़ जाते हैं। शीत ऋतु में कम तापमान के कारण फसल लगभग 130 दिन में परिपक्व होती है जबकि खरीफ मौसम में उच्च तापमान के कारण 80–90 दिन में ही परिपक्व हो जाती है। फूल बनते समय एवं बीज बनते समय लम्बे समय तक बादल छाये रहने व आर्द्रता रहने पर उपज कम होती है तथा रोग व कीटों का प्रकोप अधिक होता है अर्थात बीज बनते समय व पकते समय मौसम साफ व शुष्क होना चाहिए।

मृदा (Soil) : सूरजमुखी की खेती अम्लीय एवं क्षारीय भूमि को छोड़कर जल निकास युक्त सिंचित दशा वाली सभी प्रकार की भूमियों में की जा सकती है, लेकिन दोमट भूमि

सर्वोत्तम रहती है। 6.5–8.5 पी.एच. मान वाली मृदा में सूरजमुखी की खेती की जा सकती है।

खेत की तैयारी (Field preparation) : खेत तैयारी में ग्रीष्म ऋतु में रबी की फसल कटने के बाद पलेवा कर एक जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से तथा 2–3 जुताई देशी हल या कल्टीवेटर से कर मिट्टी भुरभुरी बना लेनी चाहिए। पाटा चलाकर नमी सरंक्षित कर लेनी चाहिए अंकुरण के समय पर्याप्त नमी की मात्रा होनी चाहिए। अंतिम जुताई के समय प्रति हेक्टेयर 25 किग्रा. मिथाइल पैराथियान 2 प्रतिशत भूमि में मिला देवें।

उन्नतशील किस्में (Improved varieties) : बी.एस.एच–1, सी.ओ–5, डी.आर.एस.एच–1, एच.एस.एफ.एच–848, ई.सी.68415, के.बी.एस.एच1, एमसन रिकार्ड, मार्डन, आर.एस.एफ एम 1, सूर्या, टी.ए.एस 82।

बीजदर एवं बीजोपचार (Seed rate and Seed treatment) : सूरज मुखी की स्थानीय किस्मों का 10–12 किग्रा. एंव संकर किस्म का 8 किग्रा. बीज प्रति हेक्टेयर पर्याप्त रहता है। सूरज मुखी के बीज का छिलका कड़ा होता है। अतः जल्दी अंकुरण हेतु 12–18 घंटे तक बीजो को पानी में भिगोकर रखें। बुआई से पूर्व प्रति किग्रा. बीज को 3–4 ग्राम थायरम या 6–10 ग्राम ट्राइकोडर्मा से उपचारित करें सूरजमुखी के बीज स्वादिष्ट होते है। अतः पक्षियों द्वारा नुकसान से बचाने के लिए खेत में प्लास्टिक या नाइलोन की जालियों का उपयोग किया जा सकता है।

बुआई का समय एंव विधि (Time of sowing and method) : सूरज मुखी की फसल तीनो ऋतुओं में बोई जाती हैं जायद में 15 जनवरी से 15 फरवरी, खरीफ में वर्षा के आगमन पर (15 जुन से 15 जुलाई) एंव रबी की बुआई 15 नवम्बर से 15 दिसम्बर तक की जाती है।

सूरजमुखी की बुआई कतारों में करना अच्छा रहता है। कतार से कतार की दूरी 45–60 सेमी. तथा पौधे से पौधे की दूरी 20–30 सेमी. तथा गहराई 4–5 सेमी. तक रखकर बुआई की जाती है।

खाद एवं उर्वरक (Manure and fertilizer) :

1. बुआई से 4 सप्ताह पूर्व प्रति हेक्टेयर 10 टन गोबर की सड़ी हुई खाद का प्रयोग करें।
2. बुआई के समय प्रति हेक्टेयर 300 किग्रा. सिंगल सुपर फॉस्फेट, 80 किग्रा. म्यूरेट आफ पोटाश एंव 65–100 किग्रा. यूरिया का उपयोग करें। प्रथम सिंचाई के बाद 60–100 किग्रा. यूरिया का पुनः छिड़काव करें।

सिंचाई (Irrigation) : सूरजमुखी में सिचाई फसल बुआई के समय पर निर्भर करती है। प्रथम सिंचाई बीज बोने के 25–30 दिन बाद करें तथा दूसरी सिंचाई आवश्यकता अनुसार करें। फूल आते समय पर्याप्त नमी आवश्यक है।

अन्तरा कृषि (Inter cropping) : पहली निराई गुड़ाई बीज बोने के 25–30 दिन बाद तथा दूसरी 45–50 दिन पर फूल आने से पहले करनी चाहिए सूरजमुखी का फूल बड़ा होने के कारण पौधे के गिरने का डर रहता हैं अतः 20–30 दिन बाद यूरिया देते समय पौधों पर 10–15 सेमी. मिट्टी चढाना अच्छा रहता है। रसायनों द्वारा खरपतवार नियंत्रण हेतु पैण्डीमिथालिन 30 ई.सी. की 3.3 लीटर मात्रा 600–800 लीटर पानी में घोल कर प्रति हेक्टेयर की दर से बुआई के 2–3 दिन के अन्दर छिड़काव करने से खरपतवारों का जमाव नहीं होता है।

पादप संरक्षण (Plant protection) : सूरज मुखी में कट वर्म, पत्ते कुतरने वाली लट, हरा तेला, सफेद मक्खी आदि की रोकथाम के लिए एण्डोसल्फॉन 35 ई.सी. सवा लीटर का प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव करें या मिथाइल डेमेटॉन 1 लीटर 25 ई.सी.का 800–100 लीटर पानी में घोल बना कर छिड़काव करना चाहिए। तना गलन, जड़ गलन, पत्ती धब्बा रोग की रोकथाम के लिए मैन्कोजेब 1.5 कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर की दर से पानी में घोल कर छिड़काव करें आवश्यकतानुसार छिड़काव दोहरायें। तुलासिता के नियंत्रण हेतु बीज को 4 ग्राम मैटालेक्सिल प्रति किग्रा. बीज की दर से उपचारित कर बोयें। रोग ग्रस्त पौधों को उखाड़ कर नष्ट कर दें। डाड्या रोग की रोकथाम हेतु 20–25 किग्रा. गंधक चूर्ण का भुरकाव करें अथवा 0.1 प्रतिशत केराथेन का छिड़काव करें।

पक्षियों से बचाव के लिए प्रकाश परावर्तित करने वाले एन्टीपेरट रिबन का प्रयोग करना लाभकारी रहता है।

परागण (Pollination) : सूरजमुखी में किन्ही कारणें से स्वंय परागण कम होता है जिससे पर्याप्त बीज नही बन पाते है अतः पर परागण के लिए प्रति हेक्टेयर मधुमक्खियों के 1–2 बॉक्स खेत मे रख दें या सुबह 8–11 बजे के बीच हाथ पर पतला कपड़ा लपेट कर फूलों के ऊपर हलकें से घुमाए या किसी कोमल कपड़े या फोम आदि से हलके हाथ से फूल के किनारे से गोल–गोल घुमाते हुए मध्य मार्ग तक लाए।

कटाई व मढ़ाई (Harvesting and threshing) : जब सूरजमुखी के बीज कडे हो जाए एंव सिरे के पास व वृत्त मुड़ कर पीला पड़ जाये नीचे की पत्तियाँ सूखकर गिरने लगे तब फूलों को तने के पास से हँसिया/दरांती से काट लेना चाहिए। इसके बाद 2–3 दिन धूप में सुखाने के बाद डण्डों से पीट कर या फूलों को आपस में रगड कर बीज निकाल लेंवे फसल बडे क्षेत्र में हो तो मढ़ाई के लिए थ्रेसर का प्रयोग उपयुक्त रहता है।

उपज (Yield) : उन्नत विधियाँ अपनाकर सूरज मुखी की फसल से 15–20 क्विंटल प्रति हेक्टेयर उपज ली जा सकती है।

सरसों – (Mustard)
वानस्पतिक नाम –ब्रैसिका जुन्सिया एल. (*Brassica juncea* L.)
कुल – ब्रेसीकेसी (Brassicaceae)

महत्व (Importance) : सरसों रबी में उगाई जाने वाली भारत एवं राजस्थान की प्रमुख तिलहनी फसल हैं। इसकी खेती मुख्यतः बीज के लिए की जाती है जिसमें तेल की 42–44 प्रतिशत तक मात्रा पाई जाती है। सरसों का तेल खाना बनाने, मालिश करने, साबुन, ग्रीस बनाने, फल व सब्जियों के परि–रंक्षण आदि कामों मे आता है। सरसों के तेल मे तीव्र गंध सिनिग्रिन (Sinigrin) नामक एल्कालाइड के कारण होती है। सरसों का उत्पति स्थान चीन माना जाता है कुछ लोग भारत या दक्षिणी–पश्चिमी एशिया भी मानते है। राजस्थान के प्रायः सभी जिलो में सरसों की खेती की जाती है।

जलवायु (Climate) : सरसों समशीतोष्ण व शीतोष्ण जलवायु की फसल है यह रबी मौसम मे उगाई जाती है सरसों के लिए 18^{0}–25^{0} सेल्सियस तापमान की आवश्यकता होती हैं। फसल की बढ़वार फूल आते समय अधिक वर्षा व आर्द्रता रहने से कीट व रोग का प्रकोप बढ़ता है तथा परागण कम होता है।

मृदा एवं खेत की तैयारी (Soil and field preparation) : सरसो के लिए दोमट एवं हल्की दोमट मृदा अधिक उपयुक्त है। अच्छे जल निकास वाली मिट्टी जो लवणीय व क्षारीय न हो, ठीक रहती है। सरसों हल्की ऊसर भूमि मे भी बोयी जा सकती है। 6–8.5 पी.एच.मान वाली मृदा ठीक रहती है। सरसों के लिए खरीफ की फसल कटने के बाद एक जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से तथा 3–4 जुताई देशी हल या कल्टीवेटर से करके पाटा लगाकर मिट्टी को भुरभुरी बना लेते हैं। भूमिगत कीटों को नष्ट करने के लिए प्रति हेक्टेयर 25 किग्रा. मिथाइल पैराथियान 2 प्रतिशत अन्तिम जुताई के समय भूमि में मिला देना चाहिए।

उन्नत शील किस्में (Improved varieties) : पूसा जय किसान (बायो – 902), लक्ष्मी (आर.एच. 8812), पूसा बोल्ड, पुसा कल्याणी, वरूणा(टी–59), क्रान्ति (पी.आर–15), आर. एच–30, रजत (पी.सी.आर–7), अरावली (आर.एन.393), स्वर्णज्योति (आर.एच.9802), माया (आर.के.9902), आशीर्वाद (आर.के.01–03), जगन्नाथ (वी.एस.एल.5) ।

बीजदर व बीजोपचार (Seed rate and seed treatment) : असिंचित क्षेत्र मे 4–5 किलोग्राम एवं सिंचित क्षेत्र में 2.5–3 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर की आवश्यकता होती है।बुआई से पहले बीज को 3 ग्राम थाइरम या 6–10 ग्राम ट्राइकोडर्मा या 2.5 ग्राम मैन्कोजेब प्रति किलोग्राम बीज की दर से उपचारित करें ।

बुआई का समय एवं बुआई की विधि (Time of sowing and method) : सरसों की फसल की बुआई असिंचित क्षेत्र मे 15 सितम्बर से 15 अक्टूबर तक तथा सिंचित क्षेत्र में 31 अक्टूबर तक कर देनी चाहिए। देरी से बुआई करने पर चेपा व सेफद रोली का प्रभाव होता है। जिससे उपज में कमी आती है सरसों की बुआई कतारो मे करनी चाहिए कतार से कतार की दूरी 30–45 सेमी. व पौधे से पौधे की दूरी 10–15 सेमी. तथा बीज की गहराई 4–5 सेमी. रखनी चाहिए।

खाद एवं उर्वरक (Manure and fertilizer) :

1. बुआई से 4 सप्ताह पूर्व 8–10 टन प्रति हेक्टेयर गोबर की सड़ी खाद या कम्पोस्ट खाद का प्रयोग करें।
2. सिंचित फसल के लिए 92 किग्रा. नाइट्रोजन 32 किग्रा. फास्फोरस 25 किग्रा. पोटाश एवं 250 किग्रा. जिप्सम या 40 किलो सल्फर प्रति हेक्टेयर काम लें।

सिंचाई (Irrigation) : सरसों की फसल को 3–4 सिंचाई की आवश्यकता होती है। पहली सिंचाई बुआई के 21–30 दिन बाद(शाखा बनते समय एवं फूल आने से पहले) दूसरी सिंचाई बुआई के 40–45 दिन बाद (फली निकलते समय) तीसरी सिंचाई बुआई के 70–80 दिन बाद (फली बनते समय, दाना बनते समय)करते है। पानी की मात्रा पर्याप्त है तो चौथी सिंचाई 90–100 दिन बाद दाना पकते समय करनी चाहिए।

अन्तरा कृषि (Inter cropping) : सरसों की फसल में प्रथम सिंचाई के बाद 20–25 दिन बाद निराई–गुड़ाई कर खरपतवार निकाल देने चाहिए। सरसों की फसल में ओरोबंकी नियंत्रण के लिये 200 किग्रा. नीम की खली का बुआई के समय कतारों में डाला जाना तथा बुआई के बाद फसल उगने से पहले 0.500 किग्रा. पैण्डीमेथालीन प्रति हेक्टेयर 500 लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करें। ओरोबंकी नियंत्रण के लिये ग्लाईफोसेट को बुआई के 25 दिन बाद 25 ग्राम तथा 50 दिन बाद 50 ग्राम प्रति हैक्टर की दर से 1 प्रतिशत अमोनियम सल्फेट के साथ करना चाहिए।

पादप संरक्षण (Plant protection) : कीट आरा मक्खी पेंटेडबग मोयला के लिये मिथाइल पैराथियान 2 प्रतिशत या मैलाथियान 5 प्रतिशत चूर्ण 25 किग्रा प्रति हेक्टेयर भुरके या मैलाथियान 50 ईसी 1.2 लीटर या डाईमिथयेट 30 ईसी 1.2 लीटर या 100 ग्राम थायेमिथोकजाम 25 डब्लू जी को पानी में मिलाकर छिड़काव करें आवश्यकतानुसार 15 दिन बाद पुनः छिड़के। हीरक तितली के लिए क्यूनालफॉस 25 मिली 1.2 लीटर प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़के। मोयला हेतु इमिडेक्लोप्रिड से बीज उपचार (3 ग्राम प्रति किलो बीज) + एजिडिरेक्टिन का 3 प्रतिशत छिड़काव करें।

रोग –झुलसा (Blight) : तुलासिता एवं सफेद रोली के लक्षण दिखाई देने पर मैन्कोजेब या जाइनेब 2 ग्राम प्रति लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें। आवश्यकतानुसार 20 दिन के अन्तराल पर पुनः करें। रोग के लक्षण दिखने पर रिडोमिल एम जैड 2 ग्राम प्रति लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें या ट्राईकोडर्मा डिफ्युज्ड 5 मिली प्रति लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करें आवश्यकतानुसार पुनः करें।

छाछया रोग दिखाई देते ही 20 किलो गंधक चूर्ण या 600 ग्राम घुलनशील गन्धक (80 प्रतिशत) या 1 मिली. डाइनोकेप (केराथेन) 30 ईसी प्रति लीटर पानी में मिलाकर छिड़के। तना गलन में तने पर पनिहल घब्बे बनते हैं जिन पर कवक लाल रूई की तरह फैला रहता है। पौधे मुरझा कर सूखने लगते हैं। लक्षण दिखने पर दो बार पर्णीय छिड़काव विटावेक्स पावर 2 ग्राम प्रति लीटर पानी में घोलकर छिड़काव प्रभावी पाया गया है

फसल का पाले से बचाव –

1. पाले की सम्भावना होने पर सिंचाई करे ।
2. खेत के चारों तरफ धुआँ करे ।
3. 0.1 प्रतिशत गंधक के तेजाब का छिड़काव करें (1 लीटर पानी में 1 मिली.)

कटाई मढ़ाई (Harvesting and threshing) : सरसों की फसल फरवरी मार्च तक पक जाती है। सरसों के पत्ते झड़ने लगे और फलियां पीली पड़ने लगे तो फसल की कटाई कर लें अन्यथा कटाई में देरी होने से दाने खेत में झड़ने की आशंका रहती है। कटाई के बाद पौधों को छोटे छोटे बंडलों में बाँधकर खेत में छोड़ देते हैं। पूर्णरूप से सूखने पर ट्रेक्टर थ्रेसर या बैलों से मढाई करके और औसाई कर बीजों को अलग कर लिया जाता है।

उपज (Yield) : सरसों की उन्नत विधियों से खेती करने पर औसत 15–25 क्विंटल प्रति हेक्टेयर दाने की उपज प्राप्त हो जाती हैं।

तारामीरा – (Rocket kresh)
वानस्पतिक नाम –इरूका सटाइवा *(Eruca sativa)*
कुल – ब्रेसीकेसी (Brassicaceae)

महत्व (Importance) : तारामीरा तिलहनी फसल है जो उत्तरी भारत व राजस्थान में रबी मौसम में उगाई जाती है। इसके बीजों से तेल प्राप्त होता है जो सरसों के तेल के समान ही होता है और उपयोग भी सरसों की तरह होता है तथा खली पशुओं को खिलाने के काम आती है। तारामीरा के बीज में 35 प्रतिशत तेल पाया जाता है ।

जलवायु (Climate) : तारामीरा समशीतोष्ण जलवायु का पौधा है इस फसल को 15^0–30^0 सेल्सियस तापमान की आवश्यकता होती है। फसल पकते समय मौसम शुष्क व साफ आर्द्रता का उपयुक्त रहता है लम्बे समय तक बादल छाये रहना व फूल आने के समय वर्षा होना उपज को कम करता है।

मृदा एवं खेत की तैयारी (Soil and field preparation) : तारामीरा सभी प्रकार की भूमियों में बोया जा सकता है लेकिन बलुई दोमट व दोमट मृदा जिसमें जल निकास की उचित व्यवस्था हो श्रेष्ठ रहती है। 2–3 जुताई देशी हल या केल्टीवेटर से कर पाटा लगाकर मृदा भुरभुरी बना लेते है। तारामीरा की खेती अधिकांश बारानी क्षेत्रों में की जाती है ।

उन्नत किस्में (Improved varieties) : आई.टी.एस.ए. ,टी 27, आरटीएम 314 (कर्णतारा), आरटीएम 2002 (नरेन्द्र तारामीरा), आर.टी.एस.ए 150 ।

बीज दर एवं बीजोपचार (Seed rate and seed treatment) : तारामीरा की फसल के लिए 4 किग्रा. बीज प्रति

हेक्टेयर की दर से पर्याप्त रहता है। बुआई से पहले मैन्कोजेब 2.0 ग्राम या ट्राइकोडर्मा 6–10 ग्राम प्रति किग्रा. बीज की दर से उपचारित करें।

बुआई का समय एवं विधि (Time of sowing and method) : इसकी बुआई 15 अक्टूबर से 30 नम्बवर तक कर देनी चाहिए। कतार से कतार की दूरी 45 सेमी. तथा पौधे से पौधे की दूरी 10 से 15 सेमी. रखनी चाहिए।

खाद एवं उर्वरक (Manure and fertilizer) : तारामीरा की फसल में 30 किग्रा. नत्रजन एंव 15–20 किग्रा. फास्फोरस प्रति हेक्टेयर देना चाहिए। तारामीरा तेल वाली फसल है इसलिए 200–250 किग्रा. जिप्सम प्रति हेक्टेयर देना भी लाभकारी रहता है।

सिंचाई (Irrigation) : तारामीरा की फसल बारानी क्षेत्रों में उगाई जाती है व सूखा सहन करने वाली होती है। फिर भी जहाँ सिंचाई के साधन उपलब्ध हो वहाँ प्रथम सिंचाई 40–45 दिनों में फूल आने से पहले करें तत्पश्चात आवश्यकतानुसार दूसरी सिंचाई फली में बीज बनते समय करनी चाहिए।

अन्तरा कृषि (Inter cropping) : फसल में खरपतवार नियत्रण के लिए 20–25 दिन बाद निराई – गुड़ाई करें। रसायन द्वारा खरपतवार नियंत्रण के लिए फ्लूक्लोरेलिन 1 लीटर सक्रिय तत्व प्रति हेक्टेयर भूमि में मिला दें।

पादप संरक्षण (Plant protection) :

मोयला (एफिड्स)– मोयला कीट लगते ही मिथाइल पैराथियान 2 प्रतिशत चूर्ण 25 किग्रा. प्रति हेक्टेयर की दर से फसल पर भुरकाव करें या डाइमिथोएट 30 ई.सी. या मिथाइल डेमेटोन 25 ई.सी. 1200 मिली. अथवा मोनोक्रोटोफॉस 36 एसएल 1000 मिली. का पानी में घोल बनाकर प्रति हेक्टेयर छिडकाव करें।

झुलसा (ब्लाईट) तुलासिता (डाउनीमिल्डयू) एवं सफेद रोली इन रोगों के लक्षण दिखाई देते ही मैन्कोजेब 2 ग्राम प्रति लीटर पानी का घोल बनाकर छिड़काव करें। प्रकोप अधिक होने की स्थिति में 20 दिन बाद छिड़काव दोहरायें।

कटाई एवं मढ़ाई (Harvesting and threshing) : फसल के जब पत्ते झड़ जायें और फलियाँ पीली पडने लगे तो फसल काट लेनी चाहिए अन्यथा कटाई में देर होने से दानों के खेत में झड़ जाने की आशंका रहती हैं। फसल को 2 से 3 दिन सुखाकर ट्रैक्टर द्वारा मढ़ाई कर औसाई करके दाने अलग कर लेते है फसल की थ्रेसर द्वारा मढ़ाई करना भी उपयुक्त रहता है।

उपज (Yield) : तारामीरा की उन्नत खेती से 8–10 क्विंटल उपज प्रति हेक्टेयर प्राप्त होती है।

अलसी (Linseed)

वानस्पतिक नाम –लाइनम यूसीटेटिसिमम एल. (*Linum usitatissimum* L.)

कुल – लाइनेसी (Linaceae)

महत्व (Importance) : अलसी बहुमूल्य औद्योगिक तिलहन फसल है जिसे तेल एवं रेशा दोनों के लिए उगाया जाता है। अलसी के दानों में किस्मों के अनुसार 33 से 47 प्रतिशत तक तेल पाया जाता है। अलसी का तेल जल्दी सूखने वाला होता है। इसलिए तेल का प्रयोग रंग, पेन्टस, वार्निश, साबुन और छपाई के लिए प्रयुक्त स्याही तैयार करने के लिए किया जाता है। तने से रेशा निकाला जाता है। अलसी का उत्पत्ति स्थान कुछ विद्वान अफगानिस्तान, कुछ विद्वान दक्षिण पश्चिम एशिया मानते हैं। राजस्थान में कोटा, बूंदी, झालावाड़, सवाई माधोपुर तथा टोंक जिले प्रमुख है।

जलवायु (Climate) : अलसी की फसल को ठण्डी व शुष्क जलवायु की आवश्यकता होती है। अलसी के उचित अकुंरण हेतु 25–30° सेल्सियस तापमान तथा बीज बनते समय 15–20° सेल्सियस तापमान होना चाहिए।

मृदा एवं भूमि की तैयारी (Soil and field preparation) : अलसी की फसल के लिए जल निकास युक्त भारी एवं दोमट, मध्यम उपजाऊ दोमट मृदा उपयुक्त होती है। एक जुताई मिट्टी पलटनले वाले हल से करने के बाद 2–3 बार देशी हल से या हैरो चलाकर पाटा लगाना चाहिए।

उन्नत किस्में (Improved varieties) : आर.एल 102–71, चम्बल, जवाहर 23, शिखा, त्रिवेणी, किरण, कार्तिक, जवाहर 17, जीवन, गौरव आदि।

बीज दर एवं बीज उपचार (Seed rate and seed treatment) : अलसी की फसल के बीज के लिए 15से 20 किग्रा. प्रति हेक्टेयर की आवश्यकता होती है। बुआई से पूर्व बीज को कार्बेन्डाजिम की 2.5 से 3 ग्राम मात्रा या ट्राइकोडर्मा विरड़ी की 5ग्राम मात्रा से प्रति किलो बीज दर से उपचारित कर बुआई

करनी चाहिए।

बुआई का समय एवं विधि (Time of sowing and method) : अलसी की बुआई सितम्बर अंत से लेकर मध्य अक्टूबर तक कर दे देनी चाहिए। कतार से कतार की दूरी 30 सेमी. पौधे से पौधे की दूरी 8 से 10 सेमी. रखते हैं तथा बुआई 4 से 5 सेमी. गहराई पर करनी चाहिए।

खाद एवं उर्वरक (Manure and fertilizer) : अलसी की फसल में असिंचित क्षेत्र में 30 किग्रा. नाइट्रोज 15 किग्रा. फोस्फोरस प्रति हेक्टेयर बुआई के समय ऊर कर देनी चाहिए तथा सिंचित क्षेत्र में 80 से 90 किग्रा. नाइट्रोजन 30 से 40 किग्रा. फास्फोरस एंव 30 किग्रा. पोटाश प्रति हेक्टेयर देवें। 375 किग्रा. जिप्सम तथा 25 किग्रा. जिंक सल्फेट भूमि में बुआई से पूर्व मिला देना चाहिए। अलसी की अच्छी उपज के लिए 10 टन गोबर की खाद का उपयोग करें।

सिंचाई (Irrigation) : सामान्यतः अलसी की खेती बारानी की जाती है लेकिन सिंचाई की उपलब्धता होने पर दो सिंचाई करें पहली सिंचाई शाखाएँ निकलते समय (30 से 35 दिन पर) तथा दूसरी सिंचाई फल बनने शुरू होने के समय (60 से 65 दिन) पर करनी चाहिए।

अन्तरा कृषि (Inter cropping) : खरपतवार नियंत्रण के लिए 2 निराई गुड़ाई पहली बुआई के 20–25 दिन बाद कर देनी चाहिए। रासायनिक नियत्रंण के लिए पैण्डीमिथलिन 1 किग्रा. सक्रिय तत्व को बुआई पश्चात एंव अकुरण पूर्व 500–600 लीटर पानी मिलाकर खेत में छिड़काव करें।

पादप संरक्षण (Plant protection) : अलसी की फसल में कीट कट वर्म, वायरवर्म हरे भाग को खाते हैं। नियंत्रण के लिए ईमिडाक्लोप्रिड 17.8 एस.एल. 100 मिली. प्रति हेक्टेयर की दर सये 500–600 लीटर पानी के घोल कर छिड़काव करें।

रोग– गेरूआ (रस्ट) के प्रकोप से चमकदार नारंगी रंग के धब्बे पत्तियों के दोनों और बनते हैं। रोग रोधी किस्मे बोंये तथा केप्टान + हेक्साकानोजाल की 500–600 ग्राम मात्रा 500 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिए।

उखटा रोग का प्रकोप अंकुरण से लेकर पकने तक होता है पत्तियों के किनारे मुड़कर मुरझा जाते है। नियंत्रण के लिए मृदा एवं बीज उपचार कर बुआई करें।

चूर्णिल आसिता (छाछिया) इसमें पत्तियों पर सफेद चूर्ण सा जम जाता है नियंत्रण के लिए थायोफिनाइल मिथाइल 70 प्रतिशत डब्लू.पी.300 ग्राम प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव करें।

कटाई एवं मढ़ाई (Harvesting and threshing) : फसल के पकने पर हँसिया की सहायता से कटाई कर ली जाती है। 4–5 दिन सुखाकर थ्रेसर से मढ़ाई कर दाने अलग कर लेते हैं।

उपज (Yield) : शुद्व फसल से 10–15 क्विंटल बीज प्रति हैक्टर तथा मिश्रित फसल से 4–5 क्विंटल दाना प्रति हेक्टेयर प्राप्त होता हैं।

6.4 चारे वाली फसलें (Fodder Crops)

रिजका – (Lucerne or alfalfa)
वानस्पतिक का नाम –मेडिकागो सेटाइवा *(Medicago sativa)*
कुल – फैबेसी (Fabaceae)

महत्व (Importance) : रिजका एक दलहनी, वार्षिक चारे की फसल हैं। इसे चारे की फसलों की रानी कहा जाता है। रिजका की उत्पति स्थान दक्षिण पश्चिमी एशिया माना जाता है। विश्व में रिजका की खेती सर्व प्रथम ईरान में हुई। राजस्थान में इसकी खेती करीब – करीब सभी क्षेत्रों में की जाती है।

जलवायु (Climate) : रिजका की खेती सम शीतोष्ण से शीतोष्ण जलवायु में की जाती है। रिजका की फसल ग्रीष्म ऋतु में 48^{0} सेल्सियस तक तापमान और शीत ऋतु में 6.5^{0} सेल्सियस तक निम्न तापमान सहन करने की क्षमता रखती है। रिजका राजस्थान में शरद ऋतु में उगाया जाता है।

मृदा (Soil) : रिजका के लिए उचित जल निकासयुक्त दोमट मृदा सर्वोत्तम रहती है। मृदा का पी.एच मान 6.5–7.5 इसके लिए उपयुक्त है।

खेत की तैयारी (Field prepartion) : रिजका के लिए एक जुताई गहरी मिट्टी पलटने वाले हल से तथा 2–3 जुताई देशी हल या हैरो चला कर करनी चाहिए। प्रत्येक जुताई के बाद पाटा लगाकर भूमि को भुरभुरी व समतल बना लें।

उन्नत किस्में (Improved varieties) आनन्द–1, आनन्द–2, एन.डी.आर.आई, सलैक्शन–1, चेतक, सिरसा–9, कम्पोजिट–5 काफी अच्छी किस्में हैं।

बीज दर एवं बीजोपचार (Seed rate and seed treatment) : छिटकवाँ विधि से बुआई करने पर 20–25 किग्रा. बीज व कतारों में बुआई करने पर 15 किग्रा. बीज प्रति हेक्टेयर पर्याप्त रहता है।

रिजके के बीज में अमरबेल के बीजो का मिश्रण हो सकता

है इन बीजों को अलग करने के लिए रिजके के बीजों को 2 प्रतिशत नमक के घोल मे डुबोते है जिससे रिजके के कच्चे बीज, अमरबेल के बीज हल्के होने कारण घोल के ऊपर तैरते है जिन्हें निथार कर अलग कर देते है घोल मे नीचे बैठे बीजों को साफ पानी से धोकर सुखा लेते हैं। इसके बाद रिजके के बीजों को राइजोबियम मेलिलोटई कल्चर से उपचारित करना चाहिए।

बुआई का समय एवं विधि (Time of sowing and method) : रिजके की बुआई हेतु मध्य अक्टूबर से मध्य नवम्बर तक का समय उपयुक्त है, रिजका की बुआई तैयार भूमि में क्यारियाँ बनाकर निश्चित मात्रा में बीज छिड़कर रेक चलाकर मिट्टी में मिला देते है बीज 1 सेमी. से अधिक गहराई पर ना बोये अकुंरण प्रभावित होता है।

खाद एवं उर्वरक (Manure and fertilizer) : रिजके की फसल में 20 टन प्रति हेक्टेयर की दर से सड़ी हुई गोबर की खाद बुआई के एक माह पूर्व खेत में मिलादें। चारे की अधिक पैदावार के लिए 20 किग्रा. नाइट्रोजन व 30 किग्रा. फास्फोरस प्रति हेक्टेयर की दर से बुआई से पूर्व दें। प्रत्येक कटाई के बाद 15 किग्रा. नाइट्रोजन प्रति हेक्टेयर दें।

सिंचाई (Irrigation) : रिजके की फसल में 10–12 सिंचाई की आवश्यकता होती है। सर्दियों में सिंचाई 15–20 दिन के अत्तराल पर करना चाहिए।

अन्तरा कृषि (Inter cropping) : रिजका की फसल में अमर बेल तथा अन्य खरपतवारों के नियंत्रण के लिए पेण्डीमिथालिन की 1.0 किग्रा. सक्रिय तत्व मात्रा प्रति हेक्टेयर की दर से बुआई के बाद (उगने से पहले) छिड़काव किया जा सकता है।

पादप संरक्षण (Plant protection) : रिजका को हानि पहुचाने वाले कीट रिजका इल्ली, चनाइल्ली, व सेंमीलूपर हैं। फसल में कीटो का प्रकोप होते ही चारा खेत से जल्दी से काट लेना चाहिए और कीटनाशक दवा जैसे थायोडान या मेटासिस्टोक्स 1 लीटर प्रति 1000 लीटर पानी में घोल कर फसल पर छिड़काव करें। कीटनाशी के प्रयोग के 2 सप्ताह तक चारा पशुओं को न खिलायें।

सर्दियों में हवा में अधिक नमी होने पर रिजका मे मृदरोमिल आसिता रोग का प्रकोप हो जाता है और पत्तियाँ खराब हो जाती है रोग प्रारम्भ होते ही चारे की कटाई कर लेनी चाहिए।

कटाई (Harvesting) : रिजके की पहली कटाई बुआई के 60 दिन बाद करनी चाहिए। इसके बाद सर्दियों मे 30 दिन के अत्तराल पर एवं गर्मियों में 20–25 दिन के अत्तराल पर कटाई करें।

उपज (Yield) : रिजका की 7 से 9 कटाईयों से 700–1000 क्विंटल हरा चारा प्रति हेक्टेयर प्राप्त किया जा सकता है।

बरसीम – (Berseem or Egyptian clover)
वानस्पतिक नाम –ट्राइफोलियम एलेक्जेन्ड्रिनम (*Trifolium alexandrinum*)
कुल – फैबेसी (Fabaceae)

महत्व (Importance) : बरसीम चारे की दलहनी फसल है। बरसीम हरे चारों में अपने गुणों द्वारा दुधारू पशुओं के लिए प्रसिद्ध है। जो बहुत ही पौष्टिक व स्वादिष्ट चारा है। चारा अत्यन्त मुलायम, स्वादिष्ट एवं प्रोटीन और खनिज तत्वों से भरपूर होता है। इसमे प्रोटीन की औसत मात्रा 17–21 प्रतिशत होती है। इसको चारे की फसलों का सम्राट कहा जाता है। बरसीम की उत्पति स्थान एशिया माइनर के देश माने जाते हैं। राजस्थान के कुछ भागों मे इसकी खेती की जाती है।

जलवायु (Climate) : बरसीम को रबी की फसलों के साथ उगाते हैं इसके लिए शीतोष्ण कम गर्मी वाले क्षेत्र उपयुक्त रहते है इसकी समुचित वृद्धि हेतु 25°–26° सेल्सियस तापमान अति उत्तम रहता है।

मृदा एवं खेत की तैयारी (Soil and field preparation) बरसीम की खेती के लिए जल निकास युक्त दोमट से चिकनी दोमट मृदा सर्वोतम रहती है। पी.एच.मान 7 से ऊपर वाली मृदाएँ सर्वोतम मानी जाती है। एक जुताई मिट्‌टी पलटने वाले हल से तथा दो–तीन जुताई देशी हल से करें। बरसीम का बीज काफी छोटा होता है, अतः मिट्टी भुरभुरी कर लेनी चाहिए।

उन्नत किस्में (Improved varieties) : मसकावी, खदरावी, फहाली, पूसा जाइन्ट, टी–780, वरदान राजस्थान के लिए वरदान, मसकावी किस्में उपयुक्त पाई गई है ।

बीजदर एवं बीजोपचार (Seed rate and seed treatment) : बरसीम के लिए 25–30 किग्रा बीज प्रति हैक्टर की आवश्यकता होती है। बरसीम के बीजों मे कासनी खरपतवार

के बीज मिले होते है। अतः बुआई पूर्व 5 प्रतिशत नमक के घोंल में डालते हैं। बरसीम के कमजोर बीज व कासनी के हल्के बीज होने के कारण ऊपर तैरते है। बरसीम के बीज अपेक्षाकृत भारी होने कारण नीचे बैठ जाते है जिन्हे निकालकर साफ पानी से धोकर सुखा लेते है। बीजो को राइजोबियम कल्चर से भी उपचारित कर बुआई करनी चाहिए। 1 लीटर पानी में 15 ग्राम गुड़ का घोल गर्म कर तैयार कर ठण्डा करे फिर इसमें एक पैकेट कलचर को अच्छी तरह से मिला देते है इसके बाद बीजो को छाया मे सुखाकर, खड़े पानी मे छिटक कर बोए ताकि तेज हवा से न उड़े। इसके तुरन्त बाद सिंचाई करें।

बुआई का समय एवं विधि (Time of sowing and method of sowing) : बरसीम की बुआई के लिए अक्टुबर माह उपयुक्त है बरसीम की बुआई दो प्रकार से की जाती है। छिटकवाँ विधि इसे समस्त खेत मे क्यारियाँ बनाकर 5–7 सेमी. पानी भरकर रेक चलाकर कीचड़ कर देते है फिर इसके बीज छिड़क देते है या समतल क्यारियों मे बीज छिड़कर रेक चलाकर मृदा मे मिला देते है और बाद में क्यारियों मे 5–7 सेमी. पानी भरते हैं। बरसीम का बीज छोटा होने के कारण कतारों मे बुआई कठिन होती हैं।

खाद एवं उर्वरक (Manure and fertiliser) : 20 टन प्रति हेक्टेयर की दर से सड़ी हुई गोबर की खाद बुआई के एक माह पूर्व खेत में मिला दें। चारे की अधिक पैदावार के लिए 20 किग्रा. नाइट्रोजन व 30–40 किग्रा. फॉसफोरस प्रति हेक्टेयर की दर से बुआई से पूर्व डाले प्रत्येक कटाई के बाद 4 किग्रा. नाइट्रोजन प्रति हेक्टेयर देवें।

सिंचाई (Irrigation) : बरसीम की फसल मे 8–10 सिंचाइयों की आवश्यकता होती है। पहली दो सिंचाइयाँ बुआई के तुरन्त बाद या 5–7 दिन के अन्तराल में करें बाद में सर्दियों में 15–20 दिन एवं गर्मियों मे 8–10 दिन के अन्तराल पर करनी चाहिए।

अन्तरा कृषि (Inter cropping) : बरसीम मे मुख्य खरपतवार कासिनी के पौधे होते हैं, इसलिए कासिनी को अन्य खरपतवारों के साथ सिंचाई के बाद हाथ से उखाड़ देना चाहिए अगर कासिनी की अधिक मात्रा हो तो डाइनोसेल एसीटेट (घुलनशील पाउडर) 1.5 किग्रा. प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव करना चाहिए, इसके अलावा 0.2 कि.ग्रा आक्सीफ्लोरफेन प्रति हैक्टर बुआई के बाद व अंकुरण से पूर्व छिड़काव करने से फसल में खरपतवारों का प्रभावी नियंत्रण होता है।

पादप सरंक्षण (Plant protection) : बरसीम की फसल मे रोमिल इल्लियों का प्रकोप अधिक होता है ऐसी अवस्था मे फसल काटकर जानवरों को खिलाना उचित रहता है कटाई के बाद भूमि पर रोलर चलाकर सिंचाई करने से कीट रोलर की नीचे दबकर पानी मे डूबकर मर जाते हैं। बरसीम में कोई खास2 रोग नही लगते है कभी कभी गेरूई व जड़ सड़न रोग लग जाते हैं, इसके लिए उचित फसल चक्र अपनाने चाहिए ।

कटाई (Harvesting) : बरसीम की अगेती फसल हो तो कटाई 45–50 दिन पर करें ताकि दूसरी कटाई जल्दी ले सकें। सर्दियों में कटाई 30 दिन के अन्तराल में करनी चाहिए एव गर्मियों में 20 दिन के अन्तराल पर करें।

उपज (Yield) : बरसीम की उपज 800–1000 क्विंटल प्रति हेक्टेयर होती है। यदि फरवरी के बाद फसल बीज के लिए छोड़ी गई है तो 5–6 क्विंटल बीज तथा 400–500 क्विंटल हरा चारा प्रति हेक्टेयर प्राप्त हो जाता है।

6.5 रोकड़ फसलें (Cash Crops)

गन्ना (Sugarcane)
वानस्पतिक नाम –सैकेरम ओफीसीनेरम *(Saccharum officinarum)*
कुल – पोएसी (Poaceae)

महत्व (Importance) : गन्ने का उपयोग चीनी (white sugar) खाण्ड सारी (brown sugar) एवं गुड. (jaggery) बनाने में किया जाता है। गन्ने की मिलों से प्राप्त शीरा (molasses) शराब बनाने के काम आता है। गन्ने की खोई (पत्तियों व पिराई के बाद बचा रेशा) कागज व कार्ड बनाने व कम्पोस्ट खाद के काम आता है। गन्ने की उत्पति स्थान भारत माना जाता है। राजस्थान मे गन्ने की खेती कोटा, बूंदी, श्रीगंगानगर, उदयपुर, भीलवाड़ा व बांसवाड़ा जिलों में की जाती है।

जलवायु (Climate) : गन्ना उष्णकटिबन्धीय जलवायु का पौधा है। गन्ने के अंकुरण के लिए 25°–30° सेल्सियस तापमान 50–55 प्रतिशत आर्द्रता, बढ़वार के लिए

31°–37°सेल्सियस तापमान 80–90 प्रतिशत आर्द्रता एवं पकने के लिए 25°–30° सेल्सियस तापमान 70–75 प्रतिशत आर्द्रता उपयुक्त होती है।

मृदा (Soil) : गन्ने के लिए अच्छे जल निकास वाली दोमट भूमि सर्वोतम होती है।

खेत की तैयारी (Field preparation) : गन्ने की फसल के लिए एक गहरी जुताई सबसॉयलर या मिट्टी पलटने वाले हल से तथा 2–3 क्रॉस जुताई देशी हल या कल्टीवेटर से कर पाटा लगाकर मिट्टी भुरभुरी व समतल कर लेनी चाहिए। भूमिगत कीटों को नष्ट करने के लिए मिथाइल पैराथियान 2 प्रतिशत 25 किग्रा. या लिंडेन 2 प्रतिशत 25 किग्रा. प्रति हेक्टेयर की दर से भूमि मे अन्तिम जुताई के समय बुआई से पूर्व मिला देना चाहिए।

उन्नतशील किस्में (Improved varieties) : :–गन्ने की विभिन्न किस्में निम्न प्रकार की है –

शीघ्र पकने (9–10 माह) वाली किस्में– को. 7314, को. 64, को. 997, को. 449, को. 1253, को. 1007, को. 111, बी. ओ 91।

मध्यम से देर तक (12 से 14 माह) में पकने वाली किस्में – को.6304, को.7318, को.6217, को. 527 ।

नई उन्नत किस्में :–शीघ्र (9–10 माह) पकने वाली– को. 8209, को. 7704, को. जवाहर 86141, को. जवाहर 86572 ।

मध्यम से देर (12–14) माह में पकने वाली को. जवाहर 94141, को. जवाहर 86600, को. जवाहर 862087 ।

बीज दर (Seed rate) : बुआई के लिये काम में आने वाला गन्ना बीज गन्ना कहलाता है। गन्ने का तीन तीन आँख वाला टुकड़ा कर बुआई करते हैं, क्योंकि पूरा गन्ना बोने पर ऊपरी शिरा ही अंकुरित होता है इसका कारण ऊपरी सिरे पर पायें जाने वाले हार्मौन नीचे जड़ की और गमन करके नीचे के भाग की कलिकाएँ अंकुरित नही होने देते इस प्रकिया को टॉपडोमिनेस (Topdominace) कहते है टुकड़े करने से यह प्रक्रिया रूक जाती है। गन्ने का ऊपरी सिरा बुआई के काम लेना चाहिए इसके निम्न कारण है–

1. ऊपरी भाग की कलिकाओं की अंकुरण क्षमता अधिक होती है।
2. ऊपरी भाग की कलिका अंत तक पत्तियों से ढकी रहने से कीट से सुरक्षित रहती है।
3. गन्ने के ऊपरी भाग में पर्ण की लम्बाई कम होने से प्रति इकाई लम्बाई अधिक आँखे प्राप्त होती हैं अच्छी पैदावार के लिए तीन कलिका वाले टुकड़ों की 45–50 हजार तक संख्या पर्याप्त रहती है इनका बजन करीब 60–70 क्विंटल प्रति हेक्टेयर रहता है। गन्ने के टुकडे कटाई के तुरन्त बाद बो देने चाहिए।

बीज उपचार (Seed treatment) : गन्ने के बीजों का अंकुरण बढ़ाने, शीघ्र वृद्धि, फंफूद जनित रोग से बचाने हेतु निम्न रसायनों से उपचारित करें–

1. एगलाल 0.5 प्रतिशत (500 ग्राम दवा 100 लीटर पानी) या एंरीटोन 0.25 प्रतिशत (250ग्राम 100 लीटर पानी से)टुकडो को उपचारित करें। टुकड़ों को 10 मिनट तक घोल मे डुबोकर रखे या कार्बेन्डाजिम 2 ग्राम प्रति लीटर के घोल में 15–20 मिनट तक डुबाकर रखें।
2. चूने के घोल में टुकडों को उपचारित करने से अकुंरण अच्छा होता है।
3. टुकड़ों को 10 पी.पी.एम. के एन.ए.ए. हार्मोन घोल में उपचारित करने से जड़ों का विकास शीघ्र होता है।

बुआई का समय एवं बुआई विधि (Time of sowing and method) : गन्ने की अधिक उपज लेने के लिए सर्वोतम समय (शरद कालीन) अक्टूबर नवम्बर है। बसंत कालीन गन्ना फरवरी–मार्च में लगना चाहिए। वर्षा कालीन गन्ना जून से जुलाई में लगाया जाता है।

गन्ने की बुआई निम्न विधियों से की जाती हैः–

1. समतल खेत में बुआई इस विधि में समतल खेत में 75–90 सेमी. दूरी पर देशी हल या ट्रेक्टर चालित रिजर से 6–8 सेमी. गहरी कूड़ बना देते हैं इन कूड़ो में बीज गन्ना के टुकडो को बिछाकर पुनः पाटा चला देते हैं।
2. नालियों मे बुआई :– इस विधि में खेत में 90 सेमी. दूरी पर नालियाँ बनाते हैं। नालियों की गहराई 20 सेमी. चौडाई 45 सेमी. रखते हैं।
3. समतल बुआई करके मिट्टी चढ़ाना इस विधि में समतल खेत में बुआई करके वर्षा ऋतु में पौधे पर मिट्टी चढ़ाते हैं। शुगरकेन प्लान्टर से भी बुआई की जा सकती है। बुआई में गन्ने के टुकड़े दो तरह से लगाते हैं। 1. सिरे से सिरा मिलाकर 2. आँख से आँख मिलाकर लगाते है।

खाद एवं उर्वरक (Manure and fertilizer) : गन्ने की फसल की अवधि अधिक होती है अतः उर्वरक प्रबंधन पर विशेष ध्यान देना चाहिए। इसके लिए बुआई से 1 माह पूर्व 50–60 टन गोबर की सड़ी हुई खाद खेत में बिखेर के जुताई कर दें। उर्वरक मृदा पोषक तत्व उपलब्धतानुसार 120–150 किग्रा. नाइट्रोजन, 50–60 किग्रा. फास्फोरस, 40 किग्रा. पोटैशियम प्रति हेक्टेयर की दर आवश्यक होती है।

सिंचाई (Irrigation) : गन्ने की फसल में 15–20 दिन के अन्तर पर एवं गर्मी में 8–10 दिन के अन्तर पर सिंचाई करे।

अन्तरा कृषि (Inter cropping) : इसके लिए 3–4 बार निराई गुड़ाई करनी चाहिए। रासायनिक नियंत्रण के लिए अट्राजिन 400 ग्राम 800 लीटर पानी में या सिमेजिन 50% सक्रिय तत्व 3 किग्रा. मात्रा 1000 लीटर पानी में घोल कर प्रति हेक्टेयर बुआई के बाद अकुरण से पूर्व (नमी पर्याप्त होने पर) छिड़काव करना वाहिए। बाद में उगे खरपतवारो के लिए 2–4 डी सोडियम साल्ट 1 किग्रा. प्रति हेक्टेयर 800 लीटर पानी में घोल कर छिडकाव करें।

मिट्टी चढ़ाना : फसल को गिरने से बचाने के लिए रीजर से मिट्टी चढ़ाना शरद कालीन फसल में प्रथम मिट्टी फरवरी –मार्च में तथा अन्तिम मिट्टी मई माह में चढ़ाना चाहिए। कल्ले फूटने से पहले मिट्टी नही चढ़ानी चाहिए।

बँधाई :–गन्ना को गिरने से बचाने के लिए गन्ने के झुण्ड (समूह) को गन्ने की सूखी पत्तियों से बाँधना चाहिए। यह कार्य अगस्त के अन्त में या सितम्बर माह में करना चाहिए।

पादप संरक्षण (Plant protection) : गन्ने की फसल रोग व कीटों से बचाने के लिए निम्नानुसार पौधे संरक्षण उपाय करें।

कटाई (Harvesting) : गन्ने की कटाई गन्ने की पत्तियाँ पीली हो जाये तो, गन्ने को आपस में टकराने पर धातुओं **(Metals)** जैसी ध्वनि निकले, कटे गन्ने को धूप मे देखने पर शक्कर के दाने धूप में चमकते नजर आएं, गन्ने की पोरी आसानी से टूट जाने, गन्ने का रस मीठा लगने लगे तथा चीनी की मात्रा हैण्ड रिफ्रक्टोमीटर के अनुसार 20 पाठ्यांक या इससे अधिक हो तो समझो गन्ना पक कर तैयार हैं। कटाई गंडासे से या तेज धार वाले यत्रों से करें ऊपरी भाग दँराती से काटकर पशुचारे में काम लेते हैं। गन्ने का कोल्हू से रस निकालने पर 70 प्रतिशत तथा मशीन से निकालने पर 80–90 प्रतिशत रस प्राप्त होता है।

उपज (Yield) : गन्ना की औसत उपज 80–100 टन प्रति हेक्टेयर प्राप्त होती है उन्नत विधि से खेती कर 100 से 120 टन प्रति हेक्टेयर उपज प्राप्त हो जाती है।

गन्ने की पेड़ी (Ratooning of Sugarcane) : गन्ने की बोई गई फसल की कटाई के बाद उनकी जड़ो से पुनः फुटान होकर गन्ने के नये पौधे तैयार होते है उन पौधो के कारण जो फसल प्राप्त होती है उसे गन्ने की पेड़ी कहते है।

आलू – (Potato)
वानस्पतिक नाम . सोलेनम ट्यूबरोसम *(Solanum tuberosum)*
कुल . सोलेनेसी (Solanaceae)

महत्व (Importance) : आलू को सब्जियों का राजा कहा जाता है। इससे स्वादिष्ट पकवानो के अलावा चिप्स, भुजिया और कुरकरे भी हर जुबां के मन को भाते हैं। आलू एक पूर्ण पोषक खाद्य है। आलू की उत्पत्ति स्थान दक्षिण अमेरिका है राजस्थान में भरतपूर, धौलपुर, अलवर, कोटा, बूदीं, सिरोही, श्रीगंगानगर हनुमानगढ़ आदि जिलों में उगाया जाता है।

जलवायु (Climate) : आलू फसल के लिए मध्य ठण्डी एवं ठण्डी जलवायु आवश्यक है। आलू 120 सेमी. वार्षिक वर्षा वाले क्षेत्रों में सफलता पूर्वक उगाया जा सकता हैं। आलू की वृद्धि एवं विकास के लिए इष्टतम तापमान 15°–25°सेल्सियस के मध्य होना चाहिए। इसके अकुंरण के लिए लगभग 25° सेल्सियस संर्वधन के लिए 20° सेल्सियस और कन्द विकास के लिए 17°–19°सेल्सियस तापमान की आवश्यकता होती हैं। उच्च तापमान 30° सेल्सियस होने पर आलू विकास की प्रक्रिया प्रभावित होती हैं। अक्टूबर से मार्च तक लम्बी रात्रि तथा चमकीले छोटे दिन आलू बनने और बढ़ने के लिए अच्छे होते हैं।

भूमि एवं खेत की तैयारी (Soil and field preparation) : आलू की फसल के लिए जल निकास एवं जीवाशं युक्त बलुई दोमट, दोमट, भारी दोमट मृदाएँ श्रेष्ठ रहती हैं। मृदा जिसका पी.एच.मान 5.5–7 अत्यन्त उपयुक्त रहता है। मृदा का भली भांति भुरभुरा होना आवश्यक है आलू के लिए पहली जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से करे। 3–4 जुताई देशी हल या हैरो से करनी चाहिए। खेत में डेले हो तो पाटा चलाकर मृदा को भुरभुरी बना लेते हैं। बुआई के समय भूमि में पर्याप्त नमी होनी चाहिए। अन्तिम जुताई के समय भूमिगत कीट नियत्रंण हेतु कीटनाशक रसायन का उपयोग करना चाहिए।

उन्नत किस्में (Improved varieties) : केन्द्रीय आलू अनुसंधान संस्थान कुफरी (शिमला), हिमाचल प्रदेश में स्थित हैं।

अगेती (80–100 दिन)	मध्यम (100–115 दिन)	पिछेती (115–130 दिन)
कुफरी चन्द्रमुखी, कुफरी जवाहर, कुफरी अलंकार, कुफरी बहार, कुफरी नवताल	कुफरी मेघा, कुफरी शीतमान, कुफरी ज्योति, कुफरी चिप्सोना, कुफरी लालिमा, कुफरी बादशाह, कुफरी स्वर्ण, कुफरी चिप्सोना–2	कुफरी सिन्दूरी, कुफरी गिरिराज, कुफरी देवा

यहाँ से विकसित आलू की किस्मों के सम्मुख कुफरी लगाते हैं।

बीज दर (Seed rate) : आलू के बीज के कन्द 3 से 4 सेमी. (30–40 ग्राम भार) आकार के 25–30 क्विंटल प्रति हेक्टेयर पर्याप्त रहता है। अगेती फसल के लिए समूचे कन्द ही बोये जाते है। मध्यम व पिछेती बुआई के लिए कन्द की लम्बाई में 2–3 आँख वाले टुकड़े काटकर प्रयोग करते हैं। कन्दों की मात्रा उनके आकार व अन्तरण पर निर्भर करती हैं। छोटे आकार के बीज 10–12 क्विंटल कन्द प्रति हेक्टेयर पर्याप्त होता हैं।

बीजोपचार (Seed treatment) :

1. आलू के कन्दों को बुआई पूर्व 0.25 प्रतिशत एरीटान के घोल से उपचारित करते है अथवा 3 प्रतिशत बोरिक अम्ल से उपचारित करते हैं।
2. आलू को कन्द खुदाई के तुरन्त बाद बोने पर 2–3 माह तक सुषुप्तावस्था में रहने के कारण अंकुरित नही होता है। कन्दो की सुषुप्ता अवस्था दूर करने के लिए कंद के टुकड़ों को 1 प्रतिशत थायोयूरिया या जिब्रेलिक अम्ल या पोटेशियम थायोसायनेट के घोल से उपचारित करके बोयें। थायोयूरिया की 1 किग्रा. मात्रा 10 लीटर पानी में 10 क्विंटल आलु के कन्दो को उपचारित करने के लिए पर्याप्त है। दीमक, फफूंद और जमीन जनित रोग से बचाव के लिए बीज को 5 लीटर देशी गाय के गोमूत्र में बीज को उपचारित कर 1–2 घण्टे सुखाने के बाद बुआई करें।

बुआई का समय एवं विधि (Time of sowing and method) : आलू की बुआई का समय उसकी किस्म जलवायु व स्थान पर निर्भर करता हैं। आलू की अगेती फसल 25 सितम्बर से 10 अक्टूम्बर पिछेती (मुख्य फसल) 15 अक्टूम्बर से 30 अक्टूम्बर तक उपयुक्त समय होता हैं। पूर्वी भारत मे आलू मध्य अक्टूम्बर से जनवरी तक बोया जाता है। पहाड़ी क्षेत्रों की घाटी मे फरवरी व उच्च पहाड़ी पर मध्य मार्च से मध्य अप्रैल में की जाती है।

आलू की बुआई की निम्न विधियाँ हैं–

1. **समतल भूमि मे आलू बोना :** आलू की कतार से कतार की दूरी 45 सेमी. की दूरी तथा पौधे से पौधे की दूरी 15–20 सेमी. रखनी चाहिए। इन्हें कूड़ो मे बुआई कर के ऊपर से मिट्टी द्वारा ढक देते हैं।
2. **समतल खेत बुआई के बाद मिट्टी चढ़ाना :** इस विधि मे 60 सेमी. दूरी कतार बनाकर समतल खेत मे 15–25 सेमी. अन्तर पर 8–10 सेमी. गहराई पर आलू की बुआई की जाती है।
3. **मेड़ो पर आलू की बुआई :** इस विधि मे मेड़े बनाने वाले यन्त्र से 20–25 सेमी. दूरी पर 20–25 सेमी. की चौड़ी मेड़ बना ली जाती है, 15–20 सेमी. की दूरी पर मेड़ पर 8–10 सेमी. की गहराई पर बो दिया जाता है। मेड़ की उँचाई 15 सेमी. रखते है
4. **पोटेटो प्लान्टर से बुआई :** पोटेटो प्लान्टर से मेड़ व कूड़ बनाते हुए चलते हैं, पहली मेड पर आदमी आलू बोता है तथा प्लान्टर के पीछे चलता है। प्लान्टर जब पहले कूड़ से दूसरे कूड़ मे प्रवेश करता है तो पहले कूड़ पर बाये कन्दो को हल्की मिट्टी से ढकता हुए चलता है अगली कूड़ व मेड़ तैयार हो जाती है।

खाद व उर्वरक (Manure and fertilizer) : आलू की अच्छी उपज के लिए 125–150 टन गोबर की सड़ी खाद 50 किलो ग्राम नीम की खली 50 किलो ग्राम अरण्डी की खली इन सब खादों को अच्छी तरह मिलाकर प्रति हेक्टेयर दें।

गोबर की सड़ी खाद 50–60 टन प्रति हेक्टेयर की दर से बुआई 4 सप्ताह पूर्व में भूमि में मिला देते हैं। 100–120 किलोग्राम नाइट्रोजन 50–60 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर फास्फोरस एवं 50–60 किलोग्राम पोटाश प्रति हेक्टेयर की आवश्यकता होती है। फास्फोरस व पोटाश की पूरी मात्रा बुआई पूर्व भूमि मे ऊरकर देना चाहिए। नाइट्रोजन की मात्रा को 3 भागों में बाँटकर 25–45–60 दिन पर छिड़क कर मिट्टी चढ़ा दें। पोटाश की पूर्ति पोटेशियम सल्फेट से करनी चाहिए।

सिंचाई (Irrigation) : आलू की फसल की सफल खेती के लिए सिंचाई का महत्त्वपूर्ण योगदान है। भारी मृदा में 10–15 दिन के अन्तराल पर बुआई दोमट (हल्की मृदा में) 8–10 दिन के अन्तराल पर सिंचाई करनी चाहिए। सिंचाई करते समय ध्यान रहे मेड़ों में ही भरें। दो तिहाई से अधिक पानी न भरे सिंचाई की नाली का बहाव तेज नही होना चाहिए अन्यथा कन्दों की ऊपर की मिट्टी बहने का खतरा रहता है। इससे कन्दो पर सूर्य की किरणें सीधी पड़ने पर कन्द का रंग हरा हो जाता है स्वाद भी

बिगड़ जाता है। यह हरा रंग आलू मे पाये जाने वाले ''सोलेनीन'' नामक रासायनिक पदार्थ के छिलके के नीचे एकत्र हो जाने से उत्पन हो जाता हैं।

अन्तरा कृषि (Inter cropping) : खेती में उगे हुआ खरपतवारों उनको निकालने हेतु पहली निराई–गुड़ाई, बुआई के 25–30 दिन बाद करनी चाहिए। बुआई से पूर्व 1–1.5 किग्रा. पेण्डीमेथलीन (स्टाम्प) सक्रियतत्व 800–1000 लीटर पानी मे मिलाकर या 1 किलो ग्राम फ्लूक्लोरिन (बेसालीन) सकिय तत्व एवं 800–1000 लीटर पानी में मिलाकर प्रति हैक्टर की बुआई पूर्व छिड़काव करें, मिट्टी चढ़ाने का कार्य निराई गुड़ाई के साथ किया जाना चाहिए। फसल बोने के एक माह बाद जब पौधे 20–25 सेमी. ऊँचे हो जायें तो पहली बार मिट्टी चढ़ायें फिर 15–20 दिनों बाद दूसरी बार मिट्टी चढ़ानी चाहिए।

पादप संरक्षण (Plant protection) : सारणी 6.5.1 में देखें।

आलू की खुदाई / कटाई (Harvesting) : आलू की फसल किस्मों के अनुसार फरवरी से मार्च में तैयार हो जाती है। खुदाई करने से 15 दिन पूर्व सिंचाई बंद कर देनी चाहिए। पौधों की शाखाएँ काटकर सूखने देते है। ऐसा करने से आलू का छिलका कड़ा हो जाता है, कन्दों का आकार बढ़ जाता है तथा खुदाई कर आलू के ढेर बनाकर बोरियों में 2 से 3 दिन के लिए ढ़क देते हैं। जिससे धूप ना लगे व कन्दो पर लगी मिट्टी छूटकर अलग हो जाएँ ।

उपज (Yield) : आलू की किस्मों पर निर्भर करती है उत्तम कृषि क्रियाओं को अपना कर की गयी खेती से 250 से 400 क्विंटल प्रति हेक्टेयर उपज प्राप्त की जा सकती हैं।

सारणी 6.5.1 आलू की कीट एवं व्याधियाँ

कीट / प्रकोप /नुकसान की दशा	रोकथाम
चैपा (मोयला) कुतरा (कर्तन कीट)	एण्डोसल्फान 35 ईसी की 1.5 लीटर मात्रा प्रति हेक्टेयर छिडकें 12 .5 लीटर देशी गाय का मट्ठा + 125 किग्रा. नीम की पत्ती या 5 किलो ग्राम नीम तली या 5 किलोग्राम नीम की पत्तियाँ एक मटके में सड़ाकर, इस मिश्रण मे से 12.5 लीटर 500 लीटर पानी मे डालकर मिला कर प्रति हेक्टेयर छिड़काव करें ।
ऐपीलेकना बिटल	25 लीटर देशी गाय का गोमूत्र में 5 किलोग्राम अकौआ (आक) पत्ती, 5 किलोग्राम नीम की पत्ती 5 किलोग्राम बेसरम की पत्ती मिलाकर 10–15 दिन सड़ा कर। इस मूत्र का आधा शेष बचने तक उबालकर मिश्रण को 500 लीटर पानी मे मिलाकर तर बतर कर पम्प द्वारा प्रति हेक्टेयर छिड़काव करे ।
आलू की तितली	उपरोक्तनुसार
रोग–अगेती झुलसा	उपरोक्तानुसार एवं मैन्कोजेवरली माया 800–1000 लीटर पानी मे घोल बनाकर प्रति हेक्टेयर छिड़के आलु की बुआई पूर्व 2.5 किलो ग्राम ट्राईकोडर्मा कल्चर एक क्विंटल खाद में मिलाकर प्रति हेक्टेयर मृदा मे मिलायें।
पछेती झुलसा	उपरोक्तनुसार
काली रूसी (ब्लैक स्कार्फ)	बीज कन्दो को एगेलॉल या ऐरीटोन से उपचारित करके बोयें।
मौजक रोग	1–1.25 लीटर मैटासिस्टोक्स 800–1000 लीटर पानी मे घोल कर छिडकाव करें।

ग्वार– (Guar) (Cluster bean)
वानस्पतिक नाम–सायमोप्सिस टेट्रागोनोलोबा
(Cyamopsis tertagonoloba)
कुल – फैबेसी (Fabaceae)

महत्व (Importance) : ग्वार के दाने में ग्वार गम (गोंद) 30–35 प्रतिशत पाया जाता है। ग्वार गम का उपयोग औषधीय निर्माण, खनिज उद्योग, कपड़ा उद्योग, कागज उद्योग के साथ साथ सौन्दर्य प्रसाधन सामग्री बनाने में किया जाता है। ग्वार के दाने की चुरी पशुओं के लिए पौष्टिक आहार है। ग्वार का उत्पति स्थान भारत है। शरत में सर्वाधिक 75 प्रतिशत ग्वार उत्पादन होता है। राजस्थान में चुरू, सीकर, श्रीगंगानगर, नागौर, जोधपुर, पाली, जैसलमेर व बीकानेर प्रमुख ग्वार उत्पादक जिले हैं।

जलवायु (Climate) : ग्वार की खेती जहाँ 30–40 सेमी. वार्षिक वर्षा होती है वहाँ आसानी से की जा सकती है। बीजों के अंकुरण व जड़ों के विकास के लिए 25–30सेल्सियम तापमान उपयुक्त है। इसलिए राज्य के शुष्क एवं अर्द्धशुष्क क्षेत्र में इसकी खेती अधिक की जाती है। यह सूखा सहन करने वाली फसल है।

मृदा एवं खेती की तैयारी (Soil and field preparation) : ग्वार के लिए अच्छे जल निकास वाली व उच्च उर्वरता वाली दोमट मृदा सर्वोत्तम रहती है। 7–8 पी एच वाली हल्की क्षारीय मृदा में ग्वार की उपज आसानी से ली जा सकती है। ग्वार की फसल के लिये गर्मियों में एक जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से व 1–2 जुताई देशी हल या हैरो से कर, पाटा लगाकर भूमि तैयार कर लेते है।

उन्नतशील किस्में (Improved varieties) : आर.जी. सी. 936, आर.जी.सी. 1002, आर.जी.सी.1003, आर.जी.सी.1066, ग्वार क्रांति, आर.जी.सी. 1033, ग्वार करण, ग्वार उदय, (सूर्या ग्वार), दुर्गा सफेद ।

बीज दर एवं बीजोपचार (Seed rate and Seed treatment) : ग्वार की फसल का बीज एकल फसल हेतु 15–20 किग्रा. चारे के लिये 40–45 किग्रा. प्रति हैक्टेयर की दर से बोया जाता है। जीवाणु जुलसा रोग की रोकथाम के लिये बुआई से पूर्व प्रति किलो बीज को 250 पीपीएम एग्रीमाइसिन या 100 पीपीएम स्ट्रेप्टोसाइक्लिन के घोल में 2 घंटे भिगोकर उपचारित करें। नये खेत में पहली बार ग्वार बोने पर बीज बोने से पहले राइजोबीएम व पीएसबी जीवाणु कल्चर से उपचारित अवश्य करें। रस चूसक कीटों के नियंत्रण के लिये इमिडक्लोप्रिड 70 डब्लू एस 5 ग्राम प्रति किलो बीज की दर से उपचारित करना चाहिए।

बुआई का समय एवं विधि (Time of sowing and method) : ग्वार की बुआई असिंचित क्षेत्र में वर्षा आरम्भ होने पर सिंचित क्षेत्र में 30 जुलाई तक कर देनी चाहिए। कतार से कतार की दूरी 30–45 सेमी. एवं पौधे से पौधे की दूरी 10–15 सेमी. तथा बीज की गहराई 4–5 सेमी. कर देनी चाहिए।

खाद एवं उर्वरक (Manure and fertilizer) :

1. बुआई से 4 सप्ताह पूर्व प्रति हेक्टेयर 10 टन गोबर की सड़ी हुई खाद का प्रयोग करें।
2. अच्छी उपज के लिए 20 किग्रा. नाइट्रोजन 40 किग्रा. फॉस्फोरेस

सिंचाई (Irrigation) : वर्षा समय पर हो तो सिंचाई की आवश्यकता नहीं होती है अन्यथा 1–2 सिंचाई की जरूरत पड़ती है। पहली सिंचाई बीज बोने के 25 दिन बाद आवश्यकता पड़ने पर दूसरी सिंचाई बुआई के 50–55 दिन बाद करनी चाहिए ।

अन्तरा कृषि (Inter cropping) : ग्वार की फसल में एक निराई–गुड़ाई 25–30 दिन बाद करे। ग्वार की फसल में वर्षा नहीं होने पर जलाभाव की दशा में सल्फोंसेलिसिलिक अम्ल में 254 पी.पी.एम. मिलाकर वानस्पतिक वृद्धि एवं पुष्पन अवस्था पर दो छिड़काव करके अधिक उपज प्राप्त की जा सकती है।

पादप संरक्षण (Plant protection) : ग्वार की फसल में प्रायः एफिड, सफेद मक्खी, जेसिड नामक कीटों का प्रकोप होता हैं। इन कीटों की रोकथाम के लिए पहला छिड़काव बुआई से 30 दिन बाद 300 मिली. मिथाइल डेमोटोन 25 ईसी या इमिडाक्सीप्रिड 0.005 प्रतिशत (5 मिली / 10 लीटर पानी) ऐसिरामीप्रिड 0.004 प्रतिशत या कारबोसल्फान 0.05 प्रतिशत 250 लीटर पानी का घोल बनाकर छिड़काव करें इस प्रकार दूसरा छिड़काव बुआई के 60 दिन बाद फिर करें।

झुलसा रोग : 2.5 ग्राम स्ट्रेप्टीसाइक्लिन एवं कॉपर ऑक्सी क्लोराइड 30 ग्राम प्रति 10 लीटर पानी या 2 ग्राम कॉपर आक्सीक्लोराइड व 2 ग्राम मैन्कोजेब को छिड़काव से आधा

घण्टा पूर्व मिलाकर छिड़काव करें। आवश्यकता होने पर पुनः 15 दिन बाद छिड़काव करें।

चूर्णी फफूंद रोग : नियंत्रण हेतु केराथेन एल सी 40 मिली 4 लीटर पानी में मिलाकर या 24–25 किग्रा. गन्धक के चूर्ण का प्रति हेक्टेयर भुरकाव करें।

कटाई एवं मढ़ाई (Harvesting and threshing) : फसल पकने पर अक्टूबर से नवम्बर में कटाई कर ली जाती हैं। सूखने पर बैलों, ट्रेक्टर थ्रेसर द्वारा मढ़ाई कर दाना अलग कर लेते हैं। चारे की कटाई 60–80 दिन पर कर सकते हैं।

उपज (Yield) : उन्नत विधि से खेती करने पर ग्वार की औसत उपज 12–16 क्विटंल प्रति हेक्टेयर बीज प्राप्त हो जाता है तथा 250–300 क्विंटल हरा चारा प्राप्त हो जाता है।

6.6 रेशे वाली फसलें (Fiber Crops)

कपास (Cotton)
वानस्पतिक नाम – गोसीपियम स्पीसिज
(Gossypium spp.)
कुल – मालवेसी (Malvaceae)

महत्व (Importance) : कपास रेशेवाली आर्थिक महत्व की नकद फसल है, जिसे सफेद सोना भी कहा जाता है। वस्त्र उद्योग में कपड़े के उत्पादन का 70% भाग कपास के रेशे से ही निर्मित होता है। कपास की उत्पति के बारे में भिन्न–भिन्न मत हैं। कुछ विद्वान अफ्रीका और एशिया तथा नई दुनिया के मध्य दक्षिणी अमेरिका तथा कुछ विद्वान भारतवर्ष को कपास उत्पति का स्थान मानते हैं। राजस्थान में कपास की खेती करने वाले जिले श्रीगंगानगर, हनुमानगढ, बांसवाड़ा व पाली हैं।

वर्गीकरण :– भारत में उगाई जाने वाली कपास को दो समूहों में विभक्त किया गया है ।

1. देशी कपास

(i) गोसिपियम हरबेसियम (ii) गोसीपियम आरबोरियम

2. अमेरिकन कपास

(i) गोसिपियम हिर्सुटम, (ii) गोसीपियम बारबेडेन्स

जलवायु (Climate) : कपास एक उष्ण कटिबन्धीय फसल है। 125 से.मी.से अधिक वर्षा इसके लिए हानिकारक होती है। फूल खिलतें समय मौसम साफ व हवा शान्त होनी चाहिए क्योंकि तेज हवा के कारण इसके फूल व गूले झड़ जाते हैं।

मृदा एवं खेत की तैयारी (Soil and field preparation) : कपास के लिए गहरी दोमट जीवांश युक्त उपजाऊ व अच्छी जल धारण क्षमता वाली मृदा उपयुक्त होती है। भारत में कपास मुख्यतः कपास की काली मृदा, एल्युवियल, लाल और लैटराइट मृदा में उगाई जाती है। कपास के लिए रबी की फसल कटाई के बाद पहली जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से करके 2–3 जुताईयां देशी हल से करके खेत तैयार कर लेना चाहिए।

उन्नत किस्में (Improved varieties) :

देशी कपास की उन्नत किस्में : दिग्विजय, आर.जी. –8, आर.जी.–18, जी–1, गिरनार, प्रताप कपि–1।

अमेरिकन कपास की उन्नत किस्में : बीकानेरी नरमा, गंगानगर अगेती, आर.एस. 810।

संकर किस्में : मरू विकास (राज.एच.एच–16), एन.एच. एच–44, संकर–6 ।

बीजदर **(Seed rate) :** अमेरिकन कपास के लिए बीजदर 15–18 कि.ग्रा. देशी किस्म के लिए 12–15 कि.ग्रा. संकर किस्म के लिए 2.5–3 किग्रा. प्रति हेक्टेयर काम लेते है। आर.एस.टी.9 किस्म के लिए बीजदर 20–25 कि.ग्रा प्रति हेक्टेयर रखते है ।

बीजोपचार (Seed treatment) :

1. गुलाबी सुण्डी को नष्ट करने के लिए 40 किग्रा. बीज मे एल्युमिनियम फॉस्फाइस की एक गोली या ई.डी.बी एम्प्यूल को बन्द कमरे में 24 घण्टे तक धूमित करते है या तेज धूप मे बीज को पतली तह के रूप में फैलाकर 6 घण्टे तक रखते है।
2. बीजो के रेशे हटाने के लिए 10 किग्रा. बीजों के लिए 1 लीटर गंधक के तेजाब को प्लास्टिक पात्र मे 1–2 मिनट तक लकड़ी से हिलाते हैं, बीज काले पड़ते ही बहते हुए पानी में बीजों को धोकर प्रयोग में लेते है, तैरते बीजों को बाहर निकाल देते हैं।
3. बीज जनित जीवाणु रोग से बचाव हेतु बीजों को 6–8 घण्टे पानी में भिगोकर सुखाने के बाद 10 लीटर पानी में एक ग्राम स्ट्रेप्टोसाइक्लिन या 10 ग्राम पोषामाइसिन के

घोल में 8–10 घण्टे तक उपचारित कर सूखा लेते हैं ।

4. जड़ गलन रोग की रोकथाम के लिए बीजों को 2 ग्राम कार्बोण्डाजिम या 10 ग्राम ट्राईकोडर्मा प्रति किग्रा. बीज या दानों से उपचारित कर बुआई करते हैं।

बुआई का समय एवं विधि (Time of sowing and method) : कपास की फसल की बुआई का उपयुक्त समय 15 अप्रेल से 15 मई है। सिंचाई की पर्याप्त सुविधा न होने पर मानूसन की उपयुक्त वर्षा होते ही बुआई कर देनी चाहिए। कपास की फसल की बुआई अमेरिकन किस्मों में 60×45सेमी. देशी किस्मों में, 45×30 सेमी. तथा संकर किस्मों में 150×60 सेमीं. पर बुआई करते है।

खाद एंव उर्वरक (Manure and fertilizer) : फसल की बुआई के 3–4 सप्ताह पूर्व 8–10 टन गोबर की खाद या कम्पोस्ट प्रति हेक्टेयर की दर से खेत में हल चलाकर भली भांति मिला देनी चाहिए। कपास की अमेरिकन किस्म में 75 किग्रा. नाइट्रोजन व 45 किग्रा. फास्फोरस प्रति हेक्टेयर की दर से देना चाहिए। देशी किस्मों में 50 किग्रा. नाइट्रोजन व 25 किग्रा. फास्फोरस प्रति हेक्टेयर तथा संकर किस्मों में 100–120 किग्रा. नाइट्रोजन व 40–50 किग्रा. नाइट्रोजन व 40–50 किग्रा. फास्फोरस प्रति हेक्टेयर की दर से देना चाहिए।

सिंचाई (Irrigation) : कपास की बुआई के बाद मृदा किस्मानुसार 3 से 7 सिंचाइयों की आवश्यकता होती है निम्न क्रांतिक अवस्थाओं पर सिंचाई अवश्य करनी चाहिए पहली सिम्पोडिया शाखाएँ निकालने की अवस्था एवं 45–50 दिन फूल पुड़ी बनने की अवस्था। दूसरी फूल एवं फल बनने की अवस्था 75–85 दिन तीसरी अधिकतम गूलर (डोडी) की अवस्था 95–105 दिन। चौथी अवस्था गुलर (डोडे) वृद्धि एवं खुलने की अवस्था 115–125 दिन पर होनी चाहिए।

अन्तरा कृषि (Inter cropping) : निराई–गुड़ाई से खरपतवार नष्ट होते है और मृदा भुरभुरी हो जाती है, पहली निराई–गुराई अंकुरण के 15–20 दिन के अन्दर (पौधे 10–12 सेमी. ऊँचे होने पर) करनी चाहिए। इसके बाद एक–एक माह के अन्तर पर दो निराई–गुड़ाई करनी चाहिए। खरपतवार नाशकों में पायरेटोब्रेक सोडियम 750 ग्राम प्रति हेक्टेयर या फ्लूक्लोरिन/पेण्डीमिथालिन 1 किग्रा. सक्रिय तत्व को बुआई पूर्व उपयोग किया जा सकता है

पादप संरक्षण (Plant protection) : कपास के हानिकारक कीट सफेद मक्खी माहू (मोयला, तेला) मिली बग आदि पत्तियों से रस चूसते है और मीठा चिपचिपा पदार्थ छोड़ते हैं जो वायरस का संचरण करते है (1) इनके नियंत्रण के लिए प्रति हेक्टेयर 20–25 पीले प्रंपच लगाये, (2) नीमतेल 5 मिली. टिनो पाल/सेन्डोविट 1 मिली. प्रति लीटर पानी की दर से छिड़काव करें। (3) रासायनिक कीट नाशी में थायोमिथाक्ज्म 25 डब्ल्यू जी 100 ग्राम सक्रिय तत्व प्रति हेक्टेयर या एसिटामेप्रिड 20एस.पी. 20 ग्राम सक्रिय तत्व प्रति हेक्टेयर या इमिडाक्लोप्रिड़ 17.8 एस.एल. 200 मिली. सक्रिय तत्व प्रति हेक्टेयर या डायजोफास 40 ईसी 400 मिली. सक्रिय तत्व प्रति हेक्टेयर का छिड़काव करें। एक बार प्रयोग में लाई गई दवा का पुनः छिड़काव नही करें।

रोग (Disease) : कपास मे जीवाणु झुलसा रोग, पत्ती धब्बा रोग, पौध अंगमारी मुख्य रोग हैं। कपास मे रोग नियंत्रण के लिए निम्न उपाय करें –

(1) बीजो को बोने से पूर्व बावेस्टीन 1 ग्राम मात्रा प्रति किग्रा. बीज की दर से बीज उपचार करे ।

(2) स्टप्टोसाइक्लिन का 100 पी.पी.एम (1 ग्राम दवा प्रति 10 लीटर पानी) घोल का छिड़काव 15 दिन के अन्तर पर दो बार करें।

(3) कवक जनित रोगों की रोकथाम हेतु एन्टाकाल या मेन्कोजेब या कॉपर आक्सीक्लोराइड की 2.5 ग्राम दवा को प्रति लीटर पानी के साथ घोल बनाकर फसल पर 2–3 बार 10 दिन के अन्तराल पर छिड़काव करें।

(4) भूमि मे जल निकास की उचित व्यवस्था करनी चाहिए।

चुनाई : पौधे पर सारे फूल एक साथ नही आते हैं, जब कपास के डोडे काफी संख्या मे पक कर पूरे खिल जायें तो उनकी चुनाई करनी चाहिए। साधारणतया चुनाई अक्टूबर से दिसम्बर तक कभी–कभी जनवरी प्रथम सप्ताह तक की जाती है। सामान्यतया कपास में 5–6 चुनाई करते हैं, यह कपास की किस्मों पर निर्भर करती हैं। चुनाई कार्य प्रातः 9–10 बजे प्रारम्भ करना उचित है। जब पौधे से ओस समाप्त हो जाए तब चुनाई करनी चाहिए। कपास में बिनौले और रूई को अलग करने की विधि को ओटाई कहते हैं। हाथ चरखी या शक्ति चालित मशीन से ओटाई की जाती है।

उपज (Yield) : कपास की उपज देशी, उन्नत किस्मों से 10–15 क्विंटल प्रति हेक्टेयर संकर किस्मों से 13–18 क्विंटल प्रति हेक्टेयर तथा बीटी किस्मों से 15–20 क्विंटल प्रति हेक्टेयर तक औसत उपज प्राप्त होती हैं। कपास के रेशे वाले भाग को रूई (Lint) व बिनौले को बीज (Cottonseed) कहा जाता है। औटाई प्रतिशत देशी मे 30–40, अमेरीकन किस्मों में 30–35, संकर किस्मों में 32–34 होता है लम्बे रेशे की कपास के अच्छे गुण वाली मानी जाती हैं कपास के गुण रेशे की मजबूती, बारीकी, परिपक्वता, समानता आदि व रेशे की लम्बाई 1.5 से 3.0 सेमी. तक होती है।

सनई – (Sunn or Sunn hemp)
वानस्पतिक नाम –क्राटोलेरिया जुन्सिया एल. (*Crotolaria juncea* L.)
कुल – फैबेसी (Fabaceae)

महत्व (Importance) : शरत में सनई की खेती, हरी खाद, रेशे व दाने के लिये की जाती है। सनई के फूलों की सब्जी बनती है। इसके तने को पानी में सड़ाने के बाद ऊपर लगा रेशा रस्सी, त्रिपाल, मछली पकड़ने के जाल, रस्सियाँ आदि बनाने के काम आता है तथा यह भूमि में वायुमण्डलीय नाइट्रोजन का स्थिरीकरण करती हैं। हरी खाद के लिये सनई को प्रमुखता दी जाती है।

सनई की उत्पति का स्थान कुछ विद्वानों के अनुसार ब्राजील व कुछ के अनुसार बर्मा है। राजस्थान में इसकी खेती श्रीगंगानगर, हनुमानगढ़, भरतपुर, अलवर, जयपुर जिलों में की जाती है।

जलवायु (Climate) : सनई उष्णकटिबंध जलवायु का पौधा है। इसकी खेती 50–100 सेमी वार्षिक वर्षा वाले क्षेत्रों में की जाती है। इसमें सूखा सहन करने की क्षमता होती है।

मृदा एवं खेत की तैयारी (Soil and field preparation) : सनई की खेती जल निकास युक्त सभी प्रकार की मृदाओं में की जा सकती है इसकी खेती हल्की दोमट, भारी दोमट काली आदि मृदाओं में उगाई जा सकती है। हल्की दोमट मृदा इसकी खेती के लिए सर्वोत्तम है।

रेशे/दाने के लिए एक जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से तथा 2–3 जुताइयाँ देशी हल से करके खेत तैयार करते हैं। प्रत्येक जुताई के बाद खेत को समतल व भुरभुरा करने के लिये पाटा चलाया जाता है। हरी खाद के लिये 1 जुताई के बाद मिट्टी पलटने वाले हल से तथा 1–2 जुताई देशी हल से कर बीज छिड़क कर बुआई कर देते है।

उन्नत किस्में (Improved vareities) : सनई की निम्न किस्में रेशा, दाना व हरी खाद के लिये प्रयोग की जाती हैं – के–12, के–12 पीली, एम–35, एम–19, एम–18, आर–67–34, बी.ई–1 (सेकर), डी–9, एस.टी–55 वेल्लारी ।

बीज दर एवं बीजोउपचार (Seed rate and seed treatment) : हरी खाद के लिए 50–60 किग्रा. रेशे के लिए 40–50 किग्रा. तथा दाने के लिए 25–30 किग्रा. बीज प्रति हेक्टेयर की आवश्यकता होती है।

रोगों से बचने के लिये 4 ग्राम ट्राइकोडर्मा या 2 ग्राम कार्बेण्डाजिम प्रति किलो बीज दर से बीज उपचारित कर सकते है। वैसे सनई में बीजोपचार की आवश्यकता नही होती है।

बुआई का समय व विधि (Time of sowing and method) : सिचांई युक्त स्थानों पर हरी खाद के लिये 15 मई से 15 जून तक कर देनी चाहिये। दाने व रेशे के लिये वर्षा होने पर जून से जुलाई मध्य तक की जा सकती है।

सनई की बुआई दो प्रकार से की जाती है

1. छिटकवाँ विधि– बीजों को खेत में छिटक कर जुताई कर दी जाती है। रेशे व दाने के लिये कतारों में बुआई करना ठीक होता है।

2. कतारों में बुआई– रेशे की फसल में कतार से कतार की दूरी 50–60 सेमी और बीज के लिये बोई जाने वाली फसल कतार से कतार की दूरी 30 सेमी. व पौधे से पौधे की दूरी 25–30 सेमी रखी जाती है। बीज की बुआई सीडड्रिल या देशी हल के नाइला बाँधकर करते हैं।

खाद एवं उर्वरक (Manure and fertilizer) : सनई दलहनी फसल होने के कारण नाइट्रोजन की जरूरत नही पड़ती है। फास्फोरस व पोटाश की मात्रा 20–40 किग्रा. फास्फोरस व 20–30 किग्रा. पोटाश की मात्रा बुआई के समय ऊरकर भूमि में दे देनी चाहिए।

सिंचाई (Irrigation) : मई में बोई गई फसल (हरी खाद) में वर्षा प्रारम्भ होने से पूर्व 1–2 सिंचाई की आवश्यकता होती है बीज व रेशे की फसल में वर्षा न होने पर 1–2 सिंचाई कर देनी चाहिए।

अन्तरा कृषि (Inter cropping) : हरी खाद के लिए बोई गई फसल मे निराई–गुड़ाईकी आवश्यकता नही होती है।

बीज व रेशे की फसल मे शुरूआत मे एक दो निराई–गुड़ाई करनी चाहिए, जिससे खरपतवार नियंत्रण हो सके तथा मृदा में वायु संचार हो सके।

पादप सरंक्षण (Plant protection) :

कीट : सनई मोथ एवं लाल रोमिल इल्ली– इनके नियंत्रण के लिए 0.15 प्रतिशत एण्डो सल्फान 35 ईसी के घोल का छिड़काव करना चाहिए तना छेदक के लिए 0.04 प्रतिशत डायजीनान का घोल आवश्यकतानुसार 3–4 वार छिड़काव करें रोग गेरूई की रोकथाम के लिए0.2 प्रतिशत मैन्कोजेब के घोल का छिड़काव करे आवश्यकता होने पर दोहरायें। मौजेक के लिए यह विषाणु द्वारा फैलता है इसके लिए कोई कीटनाशी दवा का प्रयोग करे।

उखटा रोग के लिए एग्रोसन जी .एन से बीज उपचारित करें।

जीवाणु पत्ती या पर्णदान के लिए फसल चक्र अपनायें।

चूर्णी फफूंद के लिए घुलनशील गधंक जैसे इलोसोल या सल्फेक्स 3 कि.ग्रा 1000 लीटर पानी मे घोल कर प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव करें या 0.06 प्रतिशत कैराथेन दवा का छिड़काव करें।

कटाई (Harvesting) :

(अ) हरी खाद के लिए फसल बुआई के 50–60 दिन बाद फसल को खेत मे पलट देते हैं।

(ब) रेशे वाली फसल बोने के 10–12 सप्ताह बाद फसल की कटाई करते है पहले या देर से कटाई करने से अच्छे गुणों का रेशा नही मिलता है।

(स) बीज बढ़ाने के लिए– फलियों मे बीज कठोर व काला हो जायें तो कटाई कर लेनी चाहिए। कटाई हँसिये से करते हैं। फसल की सूखने के बाद डण्डों से पीट कर बीजो को अलग कर लेते हैं।

उपज (Yield) : हरी खाद की फसल से 200–300 क्विंटल प्रति हेक्टेयर जीवांश पदार्थ प्राप्त हो जाता है रेशें वाली फसल से 10–12 क्विंटल रेशा प्रति हेक्टेयर तथा दाने की फसल से 10–12 क्विंटल दाना प्रति हेक्टेयर प्राप्त हो जाता है।

सड़ाना व रेशा निकालना :– फसल कटाई के बाद छोटे–छोटे बंडल बनाते हैं जिन्हे पोखर, तालाब मे 2–3 दिन सीधे खड़े करते हैं दो दिन बाद 1.0–1.5 मीटर गहरे पानी मे तिरछे डालकर मिट्टी से दबा देते है 7–8 दिन बाद निकालकर साफ पानी से धोकर अच्छी तरह से सुखा लेते हैं सखने के बाद हाथों से रेशा उतारकर अलग कर लेते हैं।

6.7 मसाले वाली फसलें (Spice Crops)

जीरा – (Cumin) Zeera
वानस्पतिक नाम–क्यूमिनम साइमिनम लिन (*Cuminum cyminum* Linn)
कुल – एपिएसी (Apiaceae)

महत्व (Importance) : जीरा भारतीय रसोई में स्वादिष्ट खाद्य पदार्थ बनाने वाला महत्वपूर्ण मसाला है। जीरे में 2.5 से 3.5 प्रतिशत वाष्पशील तेल पाया जाता है। तेल का मुख्य अवयव क्यूमिनोल या क्यूमिन एल्डीहाइड है जिसके कारण दानों में विशेष प्रकार की जायकेदार सुगन्ध होती है। जीरे में मूत्रवर्धक, वायुनाशक, अग्नि दीपक गुण पाये जाते है। इसकी उत्पति भूमध्यसागरीय क्षेत्र में है। कुछ का मत है कि मूल स्थान मिश्र है। देश का 80 प्रतिशत से अधिक जीरा गुजरात व राजस्थान राज्य में उगाया जाता है। राजस्थान के जालौर बाड़मेर, पाली, अजमेर, जोधपुर, नागौर, टोंक, जयपुर जीरा उत्पादन के मुख्य जिले हैं।

जलवायु (Climate) : जीरे के लिए उप उष्णकटिबन्धीय जलवायु आदर्श है बुआई के समय 24^{o}– 28^{o} सेल्सियस तथा वृद्धि के समय 20^{o}–25^{o} सेल्सियस ताप उपयुक्त रहता है। जीरे के लिए साधारण ठंड वाला शुष्क मौसम श्रेष्ठ है। बीज पकने के समय शुष्क एवं साधारण गर्म मौसम फसल के लिए अच्छा रहता है। अधिक वायुमण्डलीय नमी रोग व कीटों को पनपाने में सहायक होती है। फसल पाला सहन करने में असमर्थ रहती है ।

मृदा (Soil) : जीरे की फसल के लिए जीवांश युक्त बलुई दोमट एवं दोमट मृदा जिसमें जल निकास की उचित व्यवस्था हो सर्वोत्तम रहती है।

भूमि की तैयारी (Field preparation) : जीरे की फसल के लिए एक जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से करने के बाद एक क्रोस जुताई हेरो से करके पाटा लगा देना चाहिए

तत्पश्चात् एक जुताई कल्टीवेटर से करके पाटा लगाकर मिट्टी भुरभुरी बना देनी चाहिए। जहाँ दीमक व अन्य भूमिगत कीटों का प्रकोप होता है वहाँ अन्तिम जुताई के समय एण्डोसल्फान 4 प्रतिशत या क्यूनालफॉस 1.5 प्रतिशत या मिथाइल पैराथियान 2 प्रतिशत चूर्ण 20–25 किग्रा प्रति हेक्टेयर की दर से खेत में मिला देना चाहिए।

उन्नतशील किस्में (Improved varieties) : आर.एस. 1, आर.जेड.19, आर.जेड. 209, आर.जेड.223, गुजरात जीरा–2(जीसी–2), गुजरात जीरा–4(जीसी–4), एम.सी.43।

बीज दर (Seed rate): जीरे की फसल के लिए 12–15 किलोग्राम बीज प्रति हेक्टेयर पर्याप्त रहता है ।

बीजोपचार (Seed treatment) : बीज जनित रोगों से बचाव के लिए बुआई से पूर्व बीजों को 2 ग्राम कार्बेण्डाजिम 50 डब्ल्यू पी प्रति किलो बीज की दर से उपचारित कर बोना चाहिए।

बुआई का समय एवं विधि (Time of sowing and method) : जीरे की बुआई का श्रेष्ठ समय 15 नवम्बर से नवम्बर अन्त तक है। जीरे की बुआई आमतौर पर पहले से तैयार क्यारियों में छिटकवा विधि से की जाती है । कतारों में बुआई के लिए क्यारियों में 25–30 सेमी. की दूरी पर लोहे या लकड़ी के बने हुक से कतार बना देते है बीजों को इन्हीं कतारों में 05–10 सेमी. पर डालकर दाँतली चला दी जाती है।

खाद एवं उर्वरक (Manure and fertilizer): 10–15 टन प्रति हेक्टेयर की दर से जुताई से पूर्व बुआई से (3–4 सप्ताह पूर्व) गोबर की खाद खेत में बिखेर कर मिला देना चाहिए इसके अलावा जीरे की फसल में 30 किग्रा नाइट्रोजन एवं 20 किग्रा फॉस्फोरस प्रति हेक्टेयर की दर से उर्वरक भी देवें। जीरे की अच्छी फसल के लिए नेफ्थलीन एसिटिक अम्ल (NAA) 50 पीपीएम का घोल बुआई के 40–60 दिन पश्चात् छिड़के।

सिंचाई (Irrigation) : जीरे की बुआई के तुरन्त बाद एक सिंचाई दे देनी चाहिए। सिंचाई के समय ध्यान रहे कि पानी का बहाव तेज न हो अन्यथा बीज अस्त व्यस्त हो जायेंगे। दूसरी सिंचाई बुआई के एक सप्ताह पूरा होने पर जब बीज फूलने लगे तब करें। अगर दूसरी सिंचाई के बाद अंकुरण पूरा नहीं हुआ हो या जमीन पर पपड़ी बन गई हो तो एक हल्की सिंचाई करना लाभदायक रहेगा उसके बाद भूमि की किस्म तथा मौसम के अनुसार 15–25 दिन के अन्तर पर 5 सिंचाइयाँ पर्याप्त होगी। पकी हुई फसल में सिंचाई न करें। दाना बनते समय अन्तिम सिंचाई गहरी करनी चाहिए।

अन्तरा कृषि (Inter cropping) (छटाई, निराई व गुड़ाई) : जीरे की अच्छी फसल के लिए दो निराई गुड़ाई करनी चाहिए। पहली 30–35 दिनों बाद व दूसरी 55–60 दिनों बाद करनी चाहिए। पहली निराई के बाद अनावश्यक पौधे निकालकर पौधे से पौधे की दूरी 5–10 सेमी. कर देनी चाहिए। जीरी व अन्य खरपतवार नियंत्रण के लिये फ्लूक्लोरेलीन 1 किग्रा. सक्रिय तत्व, 2.50 ली बासलीन प्रति हेक्टेयर (3 मिली. प्रति लीटर पानी में) छिड़काव कर भूमि में मिला दें तत्पश्चात् जीरे की बुआई करें या पेण्डिमिथालीन 1 किग्रा. सक्रिय तत्व (3 किलो स्टाम्प एफ 34) प्रति हेक्टेयर या ऑक्साडायर्जिल 6 ईसी 50 ग्राम सक्रिय तत्व प्रति हेक्टेयर की दर से बुआई के बाद 15 से 20 दिन के अन्दर छिड़काव करें।

पादप संरक्षण (Plant protection) :

मोयला – नियंत्रण हेतु डायमिथोएट 30 ई.सी. या मैथालियान 50 ई.सी 1 मिली. प्रतिलीटर की दर से छिड़काव करना चाहिए आवश्यकतानुसार 10–15 दिन के बाद छिड़काव को दोहरावें।

छाछिया – बीज बनते ही नियंत्रण हेतु गंधक चूर्ण 25 किग्रा प्रति हैक्टेयर की दर से बुरकाव करें या घुलनशील गंधक चूर्ण 2.5 किग्रा. प्रति हैक्टेयर की दर से छिड़कें या कैराथियान एल सी एक मिली. प्रति लीटर पानी की दर से घोलकर छिड़काव करें। आवश्यकतानुसार 10–15 दिन के अंतराल पर छिड़काव दोहरावें।

झुलसा (ब्लाइट) – इस रोग के नियंत्रण के लिए मैन्कोजेब की 2 ग्राम या टोप्सिन एम या जाइरम प्रति लीटर पानी में घोलकर छिड़कें। आवश्यकतानुसार 40–45 दिन पर पुनः छिड़काव करें।

उखटा (विल्ट) – इसके नियंत्रण के लिए ट्राइकोडर्मा 4 ग्राम प्रतिकिलो या बाविस्टीन 2 ग्राम प्रतिकिलो बीज की दर से उपचारित करके बोना चाहिए। लगातार जीरे की फसल एक ही खेत मे नहीं बोनी चाहिए। ग्रीष्मकालीन जुताई करनी चाहिए। खड़ी फसल में लक्षण दिखाई देने पर 2.50 किग्रा ट्राईकोडर्मा 100 किग्रा कम्पोस्ट के साथ मिलाकर छिड़काव कर देना चाहिए तथा हल्की सिंचाई करनी चाहिए।

जीरे में उखटा एवं झुलसा रोग नियंत्रण हेतु ट्राईकोडर्मा विरडी जैविक फंफूदनाशी 2.5 किग्रा. प्रति हैक्टेयर की दर से 100 किग्रा. गोबर की खाद में मिलाकर भूमि उपचार कर देना चाहिए या नीम की खली 150 किग्रा. प्रति हैक्टेयर बुआई से पूर्व खेत में मिला देना चाहिए।

कटाई (Harvesting) : जीरे की फसल फसल 90 से 135 दिन मे पककर तैयार हो जाती है फसल की कटाई दाँताली से करते हैं। कटी फसल को खलिहान में अच्छी तरह सुखा लेते हैं।

मढ़ाई (Threshing) : फसल की गहाई साफ फर्श पर लकड़ी से धीरे धीरे पीटकर जीरे के बीजों को अलग कर लेते हैं। दानों से मिट्टी हल्का कचरा व अन्य पदार्थ औसाई कर दूर कर लेते हैं तत्पश्चात् दानों की अच्छी प्रकार सुखाकर साफ बोरियों में भर लेते हैं।

उपज (Yield) : उपर्युक्त उन्नत कृषि विधियाँ अपनाने से 6 से 10 क्विंटल प्रति हैक्टेयर जीरे की उपज प्राप्त की जा सकती है।

धनिया (Coriander)
वानस्पतिक नाम –कोरिएन्ड्रम सेटाइवम लिन
(Coriandrum sativum Linn.)
कुल – एपिएसी (Apiaceae)

महत्व (Importance) : धनिया एक बहुमूल्य बहुउपयोगी मसाले की फसल है। धनिया के बीज एवं पत्तियाँ भोजन को सुगंधित एवं स्वादिष्ट बनाने के काम आते हैं। धनिया बीज में बहुत अधिक औषधीय गुण है। इसके अलावा कई प्रकार के खाद्य पदार्थों, पेय पदार्थों, मद्यों एवं इत्र आदि में इसका प्रयोग होता है इसकी हरी पत्तियाँ प्रोटीन विटामिन 'ए' एवं विशिष्ठ प्रकार की खुशबूयुक्त होने के कारण चटनी व सलाद में प्रयोग की जाती है। इसके दानों में लीनोलीन व कोन्ड्रयोल नामक वाष्पशील तेल पाया जाता है जो भोज्य पदार्थों को स्वादिष्ट एवं सुगंधित बनाता है। भारतीय संस्कृति में धनिये का उपयोग मंगल कार्यों में किया जाता है। इसकी उत्पति भूमध्यसागरीय क्षेत्र में मानी जाती है। राजस्थान में धनिये की खेती कोटा, झालावाड़, बूंदी, सवाई माधोपरु, अलवर, चितौडगढ़, सीकर जिलों में की जाती है।

जलवायु (Climate) : धनिये की फसल के लिए शुष्क एवं ठंडा मौसम अनुकूल होता है बीजों का अंकुरण व वृद्धि 20°–25° सेल्सियस ताप पर अच्छी होती है फूल व दाना बनते समय पाला रहित स्वच्छ साफ मौसम अच्छा रहता है। धनिया को पाले से अधिक हानि होती है। फूल वृद्धि के समय लम्बे समय तक बादल छाये रहने पर कीट व रोगों का प्रकोप अधिक होता है।

मृदा (Soil) : धनिया की फसल के लिए पर्याप्त कार्बनिक पदार्थयुक्त व जलनिकास युक्त दोमट मृदा श्रेष्ठ होती है काली भारी, या मटियार दोमट, बलुई दोमट भूमि में भी धनिया की खेती की जा सकती है मिट्टी की पी.एच. मान 6.5 से 7.5 होना चाहिए।

मृदा की तैयारी (Preparation of soil) : मृदा की किस्म के अनुसार 2–3 गहरी जुताई करके मिट्टी को भुरभुरी बना लेनी चाहिए। जुताई के तुरंत बाद पाटा चलाकर नमी को संरक्षित करें। दीमक या अन्य भूमिगत कीटों की रोकथाम हेतु अंतिम जुताई के समय एंडोसल्फान 4 प्रतिशत या क्यूनाल फॉस 1.5 प्रतिशत या मिथाइलपेराथियान 2 प्रतिशत चूर्ण 25 किग्रा. प्रति हैक्टेयर की दर से बुआई पूर्व खेत में मिलायें।

उपयुक्त उन्नत किस्में (Improved varieties) : हिंसार सुगंध, आर.सी.आर. 41, कुंभराज, आर.सी.आर. 435, आर. सी.आर. 436, आर.सी.आर. 446, जीसी 2 (गुजरात धनिया 2), आर.सी.आर. 684, पंत हरितमा, सिम्पो एस 33, जे.डी–1, ए.सी. आर. 1, सी.एस. 6, आर.सी.आर 480 ।

बीजदर (Seed rate) : सिंचिंत क्षेत्र में 15–20 किग्रा. प्रति हैक्टेयर तथा असिंचित क्षेत्र में 25–30 किग्रा. प्रति हैक्टेयर बीज की आवश्यकता होती है।

बीजोपचार (Seed treatment) : बुआई पूर्व बीजों को हाथ से दबाकर दो भागों में विभक्त कर लेते हैं विभाजित बीजों को कार्बेंडाजिम 1.5–2.0 ग्राम या कार्बेंडाजिम व थाइरस (1.5:1.5 ग्राम) 3 ग्राम या थाइरम 3 ग्राम प्रति किग्रा. बीज की दर से उपचारित करते हैं। बीज जनित रोगों से बचाव के लिए बीजों को स्टेप्टोमाइसिम 500 पी.पी.एम से उपचारित करना लाभदायक है। ट्राइकोडर्मा विरडी 5 ग्राम प्रति किग्रा. बीज की दर से भी बीज उपचारित करना लाभदायक है।

बुआई का समय एवं विधि (Time of sowing and method) : उत्तरी भारत में अधिक पैदावार हेतु उपयुक्त समय 15 अक्टूबर से 15 नवम्बर है। हरे पत्ती की फसल के लिए अक्टूबर से दिसम्बर का समय बुआई के लिए उपयुक्त है।

धनिये की बुआई (Sowing of coriander) : तैयार खेत में क्यांरियां बनाकर छिटकवा विधि से की जाती है। अच्छी उपज के लिए एवं कम नमी वाले स्थान पर बुआई कतारों में 30 सेमी की दूरी पर करें तथा पौधे की दूरी 10 सेमी रखें, बुआई 3–4 सेमी गहराई पर करें। बुआई के बाद हल्की सिंचाई करनी चाहिए।

खाद एवं उर्वरक (Manaure and fertilizer) : धनिये की अच्छी उपज के लिए बुआई से 3–4 सप्ताह पूर्व 10–15 टन गोबर की सड़ी हुई खाद या कम्पोस्ट प्रति हेक्टेयर की दर से जुताई कर खेत में मिलाएँ। सिंचित क्षेत्र के लिए 60 किग्रा. नाइट्रोजन 30 किग्रा. फॉस्फोरस व 20 किग्रा. पोटाश प्रति हेक्टेयर की दर से देना चाहिए। असिंचित क्षेत्र में 30 किग्रा.

नाइट्रोजन 30 किग्रा. फॉस्फोरस 20 किग्रा. पोटाश प्रति हेक्टेयर दर से बुआई के समय ऊरकर देना चाहिए।

सिंचाई (Irrigation) : सिंचाई की कुल संख्या भूमि के प्रकार एवं मौसम पर निर्भर होती है भारी मिट्टी में लगभग 3–4 बार एवं हल्की भूमि में 5–6 बार सिंचाई करनी चाहिए।

अंतरा कृषि (Inter Cropping) : इसके लिए धनिये में दो तीन बार निराई गुड़ाई करनी चाहिए पहली निराई बुआई के 20–30 दिन बार दूसरी व तीसरी 20–25 दिनों के अंतराल पर करनी चाहिए। रासायनिक खरपतवार नियंत्रण हेतु पेण्डामिथालीन 1.0 किग्रा./प्रति हेक्टेयर की दर से 750 लीटर पानी में घोलकर अंकुरण पूर्व छिड़काव करें। अन्य खरपतवार नाशियों का जैसे – लिनूरान, आक्नोडियजात ब्रोवेमिल इत्यादि का प्रयोग करके भी खरपतवार नियंत्रण किया जा सकता है।

पादप संरक्षण (Plant protection) : धनिये की फसल में मोयला, कटवासूड़ी, बरूथी, बीजवेधक आदि कीटों व छाछियाँ, झुलसा, स्तंभ जीटिका, उखटा आदि रोगों का प्रकोप होता है।

कीट : मोयला/चैपा, वरूथी/माइट बीज बेधक कटवासूंडी आदि कीटों कें नियत्रण के लिए मेटासिसटाक्स या डायमिथोएट 1 मिली. प्रति लीटर पानी या एण्डोसल्फान 2 मिली. प्रति लीटर पानी की दर से 500 लीटर घोल का छिड़काव करें। आवश्यकता होने पर 15 दिन बाद पुनः छिड़काव करें अथवा एण्डोसल्फान 4 प्रतिशत चुर्ण 20–25 किग्रा. प्रति हेक्टेयर की दर से खेत तैयारी कें समय जुताई करके मिलावें।

रोग (Disease) :

1. **उखटा/म्लानीविल्ट :** इसकी रोक थाम के लिये – 1. गर्मियों में गहरी जुताई करें। 2. उचित फसल चक्र अपनायें 3. नीम के तेल या गौमूत्र से बीज उपचारित करके बुआई करें। 4. थाइरम व कार्बेन्डाजिम (1.5ग्राम + 1.5 ग्राम) प्रति किग्रा. बीज की दर से बीज तैयार करें।
2. **छाछिया/चुर्णी फफूंद :** इस रोग के नियंत्रण हेतु गन्धक चुर्ण का 20–25 किग्रा. प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव करें अथवा फुलनशील गधंक 2 ग्राम कैराथेन एलसी 1 मिली. प्रतिलीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करें। आवश्यकतानुसार 10–15 दिन में दोहरायें।
3. **झुलसा/अंगमारी/ब्लाइट :** नियंत्रण हेतु मैन्कोजेब 2 ग्राम प्रति लीटर पानी की दर से घोल बनाकर छिड़काव करें।
4. **स्तंभपीटिका/स्टेमगाल :** नियंत्रण के लिये थाइरम व कार्बेण्डाजिम (1.5 ग्राम+ 1.5 ग्राम) से बीज उपचार कर बुआई करे। लक्षण दिखाई देने पर फूल बनने से पहले बेलीटान 1 ग्राम प्रतिलीटर पानी या कार्बेण्डाजिम 1 ग्राम प्रति लीटर पानी का छिड़काव करें।

पाले से बचाव : फसल को पाले बहुत हानि को होती है। बचाव के लिये पाले पड़ने की संभावना होने पर –

1. रात्रि में हल्की सिंचाई करें।
2. खेत के चारो और धुआँ कर दें।
3. गौमूत्र 10 लीटर देशी गाय का मूत्र लेकर किसी पारदर्शी बर्तन (प्लास्टिक या काँच का) में रखकर 10–15 दिन धूप में रख कर आधा लीटर पानी में मिलाकर प्रयोग करें।
4. नीम का काड़ा – 25 किग्रा. नीम की हरी ताजा पत्ती तोड़कर कुचल कर पीस कर 50 लीटर पानी में पकावें जब पानी 20–25 लीटर रह जायें तब उतार कर ठण्डा करके आधा लीटर प्रति लीटर पानी मिलाकर प्रयोग करें।

कटाई (Harvesting) : धनिये की फसल किस्म व मौसम अनुसार 90–140 दिन में पककर तैयार हो जाती है। जब फूल आना बंद हो जाये और बीजों के गुच्छो का रंग भूरा हो जाये, कटाई कर लनी चाहिये। तत्पश्चात फसल को खलिहान में सुखाकर दानों को अलग कर लेते हैं। सूखने तक फसल को पलटते रहना चाहिये।

मढ़ाई (Threshing) : सुखी फसल को पक्के साफ खलिहानों में लकड़ी से धीरे-धीरे बीजों को अलग कर लिया जाता है। टूटे व खराब दानों का बाजार में दाम कम मिलते है।

उपज (Yield) : सिचित क्षेत्र 15–20 क्विंटल व असिंचित क्षेत्र में 6–8 क्विंटल प्रति हेक्टेयर धनिये के बीजों की उपज प्राप्त होती है।

मेथी (Fenugreek)

वानस्पतिक नाम –ट्राईगोनेला फोइनम ग्रेइकम (सामान्य मेथी)

(*Trigonella foenum graecum*)

ट्राईगोनेला कार्निकुलाटा (कसूरी मेथी)

(*Trigonella carniculata*)

कुल –फैबेसी (Fabaceae)

महत्व (Importance) : मेथी एक बहुद्देशीय दलहनी फसल हैं। जिसकी पत्तियों का उपयोग सब्जी तथा दानों का उपयोग मसाले और औषधि के रूप में किया जाता हैं। मेथी के सूखे दाने का प्रयोग मसाले के रूप में सब्जियों को छौंकने व बघारने, अचारों में एवं दवाईयों के निर्माण में किया जाता हैं। मेथी की उत्पति स्थान दक्षिण–पूर्वी यूरोप व दक्षिण पश्चिमी एशिया का भाग माना जाता है। राजस्थान में मेथी की खेती मुख्यतयाः जयपुर, सीकर, झालावाड़, चित्तौडगढ़, झुंझुनू ,अलवर, नागौर, कोटा जिलों में की जाती है।

जलवायु (Climate) : राजस्थान में इसकी खेती रबी मौसम में की जाती है। इसकी प्रारम्भिक वृद्धि के लिए कम तापमान तथा मध्यम आर्द्रता वाली जलवायु उपयुक्त रहती है। फसल के पकते समय शुष्क व ठण्डा मौसम उपयुक्त रहता है।

मृदा (Soil) : दोमट या बलुई दोमट मृदा उचित जल निकास वाली श्रेष्ठ मानी जाती है। भूमि का पी.एच.मान 6 से 7 होना चाहिए।

खेती की तैयारी (Field preparation) : मेथी की खेती के लिए एक जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से तथा 3–4 जुताई देशी हल या हैरो से करते हैं तथा पाटा लगाकर मिट्टी भुरभुरी कर लेते हैं।

उन्नत किस्में (Improved varieties) : मेथी दो प्रकार की होती है।

1. साधारण मेथी (ट्राइगोनेला फोइनम ग्रइकम)
2. कसूरी मेथी (ट्राइगोनेला कार्निकुलाटा)

किस्में– आर.एम.टी.1, आर.एम.टी.143, को–1, राजेन्द्र कान्ति, गुजरात मेथी 2, हिसार सोनाली ।

बीजदर एवं बीजोपचार (Seed rate and seed treatment) : मेथी की खेती के लिए 20–25 किग्रा. बीज पर्याप्त है। कसूरी मेथी का 10 किग्रा. प्रति हेक्टेयर काम मे ले। बुआई से पूर्व बीजो को कार्बेण्डाजिम 2.0 ग्राम या एग्रोसन जी.एन. 2.0 ग्राम प्रति किग्रा. बीज दर से उपचारित करना चाहिए उसके पश्चात् बीजो को राइजोबियम व पी.सी.एम कल्चर से उपचारित करने से पौधो की वृद्धि अच्छी होती है।

बुआई का समय एवं विधि (Time of sowing and method) : मैदानी क्षेत्र मे (उत्तरी भारत में) मध्य अक्टूबर से मध्य नवम्बर तक की जाती है। कतार से कतार 25–30 सेमी. व पौधों से पौधों की दूरी 10–12 सेमी. रखतें है। उचित अंकुरण के लिए बीज की गहराई 5 सेमीं से अधिक नही होनी चाहिए।

खाद एवं उवर्रक (Manure and fertilizer) : मेथी की अच्छी उपज के लिए 10–15 टन गोबर खाद या कम्पोस्ट खाद प्रति हेक्टेयर खेत की तैयारी के समय देवें। मेथी के खेत में नीम की पत्ती, तम्बाकू, धतूरा मिलाकर 15 दिन बाद बुआई करने से भी लाभ होता है ।रासायिनिक खाद के रुप मे 20–25 किग्रा. नाइट्रोजन 30–40 किग्रा. फास्फोरस 20 किग्रा. पोटाश प्रति हैक्टर की दर से बुआई के समय उरकर देनी चाहिए।

सिंचाई (Irrigation) : मेथी में 15–20 दिन के अन्तराल पर सिंचाई करनी चाहिए। फसल में फली व बीज बनना प्रारम्भ होने के बाद भूमि में नमी की कमी उपज को प्रभावित करती है।

अन्तरा कृषि (Inter cropping) : मेथी की फसल में खरपतवार नष्ट करने एवं उचित वायु संचार हेतु दो बार निराई गुड़ाई की आवश्यकता होती है। प्रथम निराई गुड़ाई बुआई के 15–20 दिन बाद व दूसरी 40–45 दिन बाद करनी चाहिए। रासायानिक खरपतवार नियंत्रण हेतु बुआई पूर्व 0.75 किग्रा. फ्लुक्लोरेलिन प्रति हैक्टेयर की दर से 700–800 लीटर पानी मे घोल कर छिड़काव कर भूमि में मिला दें।

पादप संरक्षण (Plant protection) : रोग एवं कीट नियंत्रण – जड़गलन रोग के बचाव के लिए जैविक फफूँद नाशी ट्राईकोडर्मा से बीज उपचार एंव मृदा उपचार करना चाहिए। छाछिया / चूर्णी फंफूद रोग के लिए कार्बेन्डाजिम 0.1 प्रतिशत एंव घुलनशील गंधक की 0.2 प्रतिशत मात्रा का छिड़काव करना चाहिए। तुलासिता /झुलसा रोग की रोकथाम हेतु मैन्कोजेब या ताँबा युक्त फफूंद नाशी2 ग्राम प्रतिलीटर पानी के घोल का छिड़काव करें। चैपा / मोयला / माहू कीट का प्रकोप दिखाई देने पर 0.2 प्रतिशत डाइमेथोएट (रोगार) या इमिडाक्लोप्रिड 0.1 प्रतिशत घोल का छिड़काव करें।

कटाई एवं मढ़ाई (Harvesting and threshing) : सामान्यतः 4–5 कटाई नियमित अन्तराल पर की जाती है। दानों के लिए कटाई जब फसल पीली पड़ने लगे तथा अधिकांश पत्तियाँ ऊपरी पत्तियों को छोड़कर गिर जाये एवं फलियों का रंग पीला पड़ने लगे तो काट लेनी चाहिए। कटाई के बाद पौधों को बण्डलों में बाँधकर एक सप्ताह के लिए छाया मे सुखाया जाता हैं सूखने के बाद में बण्डलों को पक्के फर्श / तिरपाल पर रखकर लकड़ियों की सहायता से पीटा जाता है जिससे दाने फलियों से बाहर आ जाते हैं। इस काम के लिए थ्रेसर का उपयोग भी किया जा सकता है।

उपज (Yield) : उन्नत किस्मों से 50–70 क्विंटल हरी पत्तियाँ सब्जी के लिए एवं 15–20 क्विंटल दाने प्रति हेक्टेयर तक प्राप्त हो जाते है।

सौंफ (Fennel)
वानस्पतिक नाम –फौनिकुलम वल्गेर
(*Foeniculum vulgare*)
कुल – एपिएसी (Apiaceae)

महत्व (Importance) : इसका उपयोग मसाले एवं औषधि के रूप में किया जाता है। सौंफ में वाष्पशील तेल के साथ–साथ चमक, रंग, व रेशा इसकी गुणवत्ता निर्धारण के घटक हैं। इसका प्रत्येक भाग खुशबूदार होता है और किसी न किसी काम आता है। सौंफ रूचिकार, मधुर सुगंध व स्वाद के कारण सौंफ के दाने पूरे या पीसकर सूप, अचार, सॉस, चॉकलेट आदि भोज्य पदार्थो में डालते हैं। सौंफ का उत्पति दक्षिणी यूरोप तथा भूमध्य सागरीय क्षेत्र माना जाता है।राजस्थान में सौंफ की खेती सिरोही, टोंक, जोधपुर, भरतपुर, पाली, अजमेर, भीलवाड़ा जिलों में की जाती है।

जलवायु (Climate) : शुष्क व ठण्डा मौसम सौंफ की खेती के लिए श्रेष्ठ रहता है। पाला फसल को हानि पहुँचाता है। सौफ के लिए 15^{o}–25^{o} सेल्सियस तापमान अच्छा रहता है।

मृदा (Soil) : सौंफ के लिए जीवांश पदार्थ युक्त, चूना युक्त दोमट, काली बलुई दोमट मृदा जिसमें जल निकास की पर्याप्त सुविधा हो श्रेष्ठ है।

खेत की तैयारी (Field preparation) : सौंफ की फसल के लिए एक गहरी जुताई एवं 3–4 जुताई हैरो से करके मिट्टी मुलायम व भुरभुरी कर लेनी चाहिए। तैयारी के समय खेत में पर्याप्त नमी न हो तो पलेवा देकर खेत तैयार करें।

उन्नतशील किस्में (Improved varieties) : :–गुजरात सौंफ–1, आर.एफ 101, आर.एफ 125, आर.एफ. 143, पी.एफ 35, कोयम्बटूर 1 ।

बीजदर एवं बीजोपचार (Seed rate and seed treatment) : सौंफ की रोपण विधि से बुआई करने पर 3–4 किग्रा. प्रति हैक्टेयर तथा सीधी खेत में बुआई करने पर 8–10 किग्रा. बीज प्रति हेक्टेयर पर्याप्त है। बीजों को 2 ग्राम कार्बेण्डाजिम या 3 ग्राम थाइरम प्रति किग्रा. बीज की दर से उपचारित करना चाहिए। ट्राईकोडर्मा विरडी 4 ग्राम प्रति किग्रा. बीज की दर से उपाचारित करना लाभदायक होता है।

बुआई का समय एवं विधि (Time of sowing and method) : रोपण विधि से बुआई करने के लिए जुलाई अगस्त में नर्सरी तैयार करते हैं। जब पौधा 40–50 दिन का हो जाता है तो सितम्बर माह में रोपाई कर देनी चाहिए। सौंफ की सीधी खेत में बुआई छिटकवाँ विधि व कतारों में करते हैं। कतारों में 45–60 सेमी. दूरी पर हुक की सहायता से कतार बनाकर 1–2 सेमी. गहराई पर बीज डालकर मिट्टी से ढक देते हैं।

रोपाई विधि (Transplanting method) : एक हेक्टेयर क्षेत्र के लिए 100 वर्गमीटर नर्सरी पर्याप्त होती है इसके लिए जून जुलाई में 4–5 किग्रा. बीज की बुआई करते हैं। पौधा 40–50 दिन का होने पर पूर्व तैयार भूमि में रोपाई कर देते हैं। नर्सरी से पौधे निकालते समय पौधे को कम से कम नुकसान हो तथा रोपाई सायं काल के समय करके तुरंत सिंचाई करनी चाहिए।

खाद एवं उर्वरक (Manure and fertilizer) : सौंफ की अच्छी उपज के लिए 10–15 टन गोबर की खाद/कम्पोस्ट प्रति हेक्टेयर बुआई से 3–4 सप्ताह पूर्व मिट्टी में जुताई कर मिला देना चाहिए। इसके अतिरिक्त 80–90 किग्रा. नाइट्रोजन, 30–40 किग्रा. फॉस्फोरस प्रति हेक्टेयर देने से उपज अच्छी होती है।

सिंचाई (Irrigation) : सौंफ दीर्घावधि में पकने वाली फसल है इसे अधिक सिंचाइयों की जरूरत होती हैं। पहली सिंचाई बुआई के तुरंत बाद करनी चाहिए, अंकुरण कम होने पर 7–10 दिन बाद पुनः हल्की सिंचाई करनी चाहिए। गर्मियों में 10–15 दिन व सर्दियों में 20–25 दिन के अन्तराल पर सिंचाई करनी चाहिए।

अन्तराकृषि (Inter cropping) : सौंफ की फसल में बुआई के एक माह बाद जब पौधे 4–5 सेमी. ऊँचाई के हो तब पहली निराई–गुड़ाई कर देनी चाहिए। उस समय कतारों में पौधें के बीच की दूरी 25–30 सेमी. कर लेनी चाहिए। सौंफ में 3–4 निराई गुड़ाई की आवश्यकता होती है, फूल आते समय या पूर्व में पौंधों पर मिट्टी चढ़ा देनी चाहिए।सौंफ में रासायनिक खरपतवार नियत्रंण हेतु बुआई के 1–2 दिन बाद पैंण्डिमिथाइलिन 1 किग्रा. प्रति हेक्टेयर की दर से 700 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें। इसके बाद 1–2 निराई गुड़ाई कर समय–समय पर खरपतवार निकालते रहें।

पादप संरक्षण (Plant protection) : सौंफ में प्रमुख रूप से मोयला/चैपा, थ्रिप्स व बरूथी कीटों का एवं झुलसा/अंगमारी छाछिया या चूर्णी फंफूद, जड़ व तना गलन तथा गून्दिया रोगों का प्रकोप होता है।

गून्दिया रोग (गमोसिस) इसमें रोग का आक्रमण पुष्पक्रमों पर होता है पुष्पक्रम से चिपचिपा गुन्दिया पदार्थ निकलता है नियंत्रण के लिए बीज उपचार करें तथा दीर्घकालीन फसल चक्र अपनायें।

अन्य कीट व रोग नियंत्रण धनियें की फसल की तरह करें।

कटाई (Harvesting) : सौंफ 170–180 दिनों में परिपक्व होती है। सौंफ के दाने गुच्छों में आते ही जब गुच्छों व दानों का रंग हरे से पीला होने लगे तो गुच्छों को तोड़ लेना चाहिए। गुच्छों को छायादार स्थान पर रस्सी बाँधकर उनपर लटका कर सुखाया जाता है।

मढ़ाई (Threshing) : छाया में अच्छी प्रकार सूखे गुच्छों को लकड़ी के डण्डे से पीट कर अलग कर के साफ करके बोरियों में भर लेते हैं और नमी रहित स्थान पर भण्डारण कर लेते हैं।

उपज (Yield) : सौंफ की उपज किस्मानुसार 18–20 क्विंटल प्रति हेक्टेयर तक प्राप्त की जा सकती है। औसत उपज 15–16 क्विटंल प्रतिहेक्टेयर प्राप्त होती है।

अभ्यास प्रश्न –

I. बहुचयनात्मक प्रश्न

1. सीधी बुआई हेतु धान की उपयुक्त किस्म है
   (अ) रतना (ब) बाला
   (स) बीके 79 (द) जया
2. मक्का का उत्पति स्थल है।
   (अ) भारत (ब) मेक्सिको
   (स) जापान (द) चीन
3. चेपा गुन्दिया रोग से बचने हेतु बाजरा के बीज को उपचारित करना चाहिए–
   (अ) थोरियम सल्फेट के 1: घोल से
   (ब) नमक के 20: घोल से
   (स) मैन्कोजेब के 2: घोल से
   (द) उपरोक्त सभी
4. निम्न में से गेहूँ की किस्में हैं –
   (अ) जया (ब) राज. 3077
   (स) सी.एस.एच.–5 (द) राजकिरण
5. अरहर की शुद्ध फसल के लिए प्रति हेक्टेयर बीज की मात्रा चाहिए ?
   (अ) 10 किलोग्राम (ब) 15 किलोग्राम
   (स) 20 किलोग्राम (द) 25 किलोग्राम
6. बायो–902 किस किस्म का दूसरा नाम है ?
   (अ) पूसा जय किसान (ब) वरूण
   (स) क्रान्ति (द) कृष्णा
7. रिजके में अमर बेल नियंत्रण हेतु कौनसा शाकनाशी का प्रयोग करते है ?
   (अ) 2–4 डी (ब) पेन्डीमिथालीन
   (स) पेरावेक्टर (द) ऐन्ट्राजीन
8. गन्ने की बुआई हेतु तने का कौनसा भाग बीज के रूप में काम लेना चाहिए ?
   (अ) उपरी एक तिहाई (ब)नीचे का एक तिहाई
   (स) मध्य भाग (द)इनमें से कोई नही
9. निम्न में से आलु की सुषुप्तावस्था दूर करने के काम आने वाला रसायन है ।
   (अ) यूरिया (ब) थायो यूरिया
   (स) ऐगलॉल (द) ऐरीटॉन
10. हरी खाद के लिए सनई की बीजदर (किलोग्राम प्रति हेक्टेयर) है–
    (अ) 90–100 (ब) 60–75
    (स) 50–60 (द) 40–45
11. जीरे में जीरी खरपतवार के नियंत्रण हेतु काम लेते है–
    (अ) एट्राजीन (ब) साइमाजीन
    (स) डाइक्वेट (द) फ्लूक्लोरीन
12. निम्न में से मेथी की किस्म है–
    (अ) आर.सी.आर–20 (ब) आर.एम.टी 143
    (स) आर.एफ–101 (द) आर.एफ–125
13. मूंगफली में प्रोटीन की मात्रा पाई जाती है।
    (अ) 10 प्रतिशत (ब) 15 प्रतिशत
    (स) 20 प्रतिशत (द) 27 प्रतिशत
14. प्रताप (सी.50)किस्म है–
    (अ) मूँगफली (ब) तिल
    (स) मूंग (द) धान
15. बरसीम के बीजो में कौनसी खरपतवार के बीज पाये जाते है–
    (अ) हिरणखुरी (ब) कासनी
    (स) बथुआ (द) अमरबेल

II. अति लघूत्तरात्मक प्रश्न

16. डेपोग विधि कहाँ से विकासित की गई है ?
17. ज्वार की बीजदर लिखिये ।
18. जौ की फसल हेतु बोने का उपयुक्त समय लिखिये।
19. मूंग में प्रोटीन की प्रतिशत मात्रा लिखिये।
20. सोयाबीन की बुआई का उपयुक्त समय लिखिये।

21. तिल के बीज में तेल की मात्रा कितनी होती है ?
22. सूरजमुखी का एक औषधीय गुण लिखिए।
23. सूरजमुखी की प्रति हेक्टेयर उपज लिखिये।
24. रिजका में फास्फोरस तत्व कितनी मात्रा में उपयोग किया जाता है ?
25. केन्द्रीय आलू अनुसंधान संस्थान कहाँ स्थित है ?
26. ग्वार का वानस्पतिक नाम लिखिए ।
27. देसी कपास कि पाँच किस्मों के नाम लिखिए।
28. सनई किस कुल का पौधा है ?
29. मक्का की संकर किस्मों के नाम लिखिये।
30. बाजरे की उपज लिखिये।
31. धनिये की कटाई कब करते हैं ?
32. सौंफ की औसत उपज लिखिये।
33. बजरा की फसल में होने वाले दो रोगों के नाम व रोकथाम लिखिए।
34. मोठ का मुख्य रोग कौन सा है ?
35. चने की फसल में चुटाई का महत्व लिखिए।

III. लघूत्तरात्मक प्रश्न

36. मक्का के विभिन्न उपयोग लिखो ।
37. ज्वार का छोटी अवस्था का पौधा विषैला क्यों हो जाता है?
38. सफेद लट की रोकथाम कैसे करेंगे ?
39. गेहूँ में गुल्ली डण्डा व जंगली जई का नियंत्रण कैसे करेंगे?
40. उड़द का बीजोपचार लिखिये।
41. मोठ की विभिन्न उन्नत किस्मों के नाम बताइये।
42. चने में फली छेदक के नियंत्रण के उपाय लिखिये।
43. सोयाबीन का मानव के लिये उपयोग बताइये।
44. गुच्छें दार व विस्तारी किस्मों में अंतर लिखिये ?
45. सरसों की फसल में खरपतवारों की रोकथाम कैसे करेंगे?
46. बरसीम के बीजोपचार का वर्णन कीजिये।
47. कपास की चुनाई कैसे व कब करनी चाहिए ?
48. सरसों की बीज दर लिखिये।
49. सूरजमुखी का तेल हृदय रोगियों के लिए क्यों उपयोगी है?
50. धान मे खेरा नामक रोग के कारण व निवारण के बारे में लिखिये।
51. जीरे की उन्नत किस्मों के नाम लिखिये।
52. धनिये के महत्व का विवरण लिखिये ।
53. मेथी की उन्नत किस्मों के नाम लिखिये।
54. सौंफ के महत्व का विवरण लिखिये।
55. मूंग मे छाछिया रोग के लक्षण एवं रोकथाम के उपाय लिखिये।

IV. निबन्धात्मक प्रश्न

56. गेहूँ की खेती का वर्णन निम्न शीर्षकों के आधार पर कीजिये।
    (अ) जलवायु (ब) उन्नतशील किस्में
    (स) बीजदर एवं बुआई (द) खाद एवं उर्वरक
57. गन्ने की उन्नत खेती का वर्णन निम्न बिन्दुओं के आधार पर कीजिये।
    (अ) जलवायु
    (ब) भूमि एवं भूमि की तैयारी
    (स) उन्नत किस्में
    (द) बीज मात्रा एवं उपचार
    (य) बुआई समय एवं विधि
    (र) खाद एवं उर्वरक की मात्रा एवं प्रयोग विधि
58. आलू की उन्नत खेती का वर्णन निम्न बिन्दुओं के आधार पर कीजिये।
    (अ) चार उन्नतशील किस्में
    (ब) बुआई समय एवं विधि
    (स) खाद एवं उर्वरक
    (द)सिंचाई
    (य) खुदाई तथा उपज प्रति हेक्टेयर
59. कपास की खेती का वर्णन निम्न बिन्दुओं के आधार पर कीजिए ।
    (अ) वर्गीकरण (ब) जलवायु
    (स) बीजोपचार (द) बुआई का समय व विधि
60. चने की खेती का संक्षेप में वर्णन कीजिए ।
61. सरसों की खेती का वर्णन निम्न बिन्दुओं के आधार पर कीजिये ।
    (अ) उन्नतशील किस्में
    (ब) बीजदर एवं बीजोपचार
    (स) खाद एवं उर्वरक
    (द) पादप संरक्षण
    (य) कटाई एवं उपज

उत्तरमाला

1.(ब) 2.(ब) 3.(ब). 4.(ब) 5.(ब) 6.(अ) 7.(ब) 8.(अ) 9.(ब) 10.(अ) 11.(द) 12.(ब) 13.(द) 14.(ब) 15.(ब)